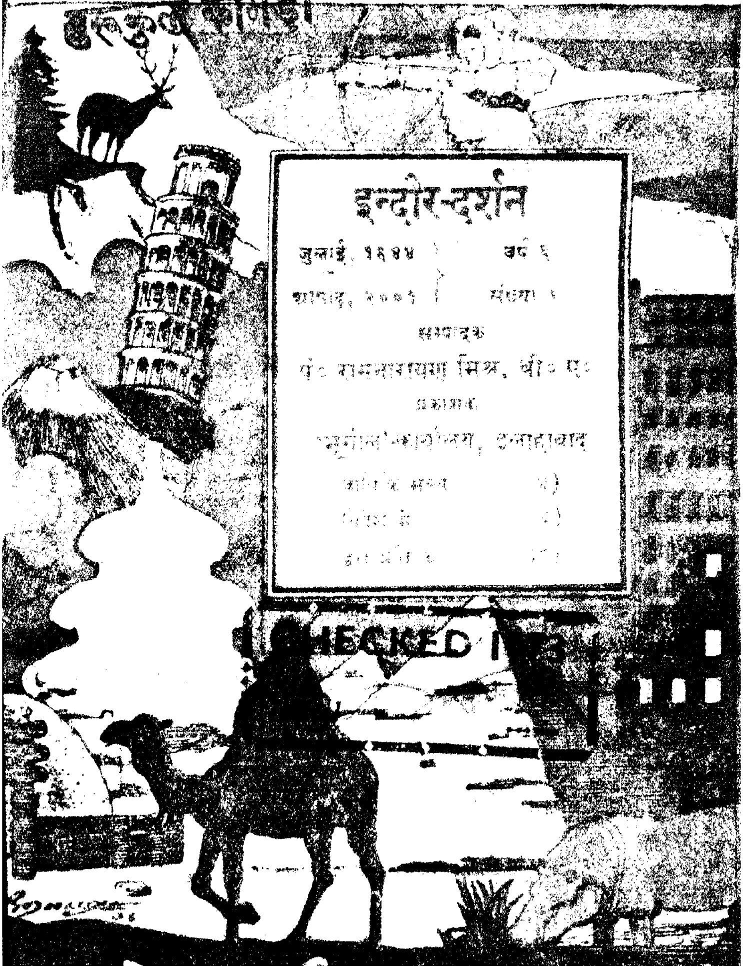
देश दर्शन

पूर्ण संख्या—५७



इन्दौर-दर्शन

जुलाई, १९४४ | वर्ष ६

आषाढ़, २००१ | संख्या १

सम्पादक

पं० रामनारायण मिश्र, बी० ए०

प्रकाशक

भूगोल-कार्यालय, इलाहाबाद

भूगोल कार्यालय — प्रयाग

विषय-सूची

७।१२।—

इन्दौर-दर्शन

स्थिति सीमा, तथा विस्तार

इन्दौर राज्य होलकर वंश के आधीन है। यह भारत के मध्यवर्तीय भाग में (जिसे मालवा और निमाड़ कहते हैं) स्थित है। यह कई बड़ी बड़ी रियासतों से मिल कर बना है। ये रियासतें २१°२२' और २४°४०' उत्तरी अक्षांश तथा ७४°२२' और ७०°३' पूर्वीय देशान्तर के बीच स्थित है। इस राज्य में नन्दवास वा नन्दवाई और आलमपुर के परगने भी शामिल हैं। ये परगने राजपूताना और बुन्देलखंड में स्थित हैं। इन सब को मिला कर इस राज्य का क्षेत्रफल लगभग ९,५०० वर्ग मील है। इसके अन्तर्गत रियासतों की विभिन्नता के कारण, इस पूरे राज्य की सीमा बतलाना बहुत कठिन है। मोटे तौर से यह कह सकते हैं कि इसके उत्तर में उदयपुर राज्य, उत्तर-पूर्व में झालवार और पूर्व में ग्वालियर देवास और धार राज्य तथा मध्य-प्रान्त का निमाड़ जिला स्थित हैं। इसके दक्षिण में बम्बई प्रान्त का खानदेश जिला और पश्चिम में ग्वालियर और बड़वानी तथा दक्षिण-पूर्व में भूपाळ हैं। इनसे अलग नन्दवास का

परगना उदयपुर की रियासत में स्थित है और परगना आलमपुर, ग्वालियर और दतिया की रियासतों से घिरा हुआ है। इनको शामिल करने पर राज्य की सीमा २१°२२′ और २६°६०′ उत्तरी अक्षांश तथा ७४°२२′ और ७८°५१′ पूर्वीय देशान्तर रेखाओं को छूती है।

इस राज्य का यह नाम, इसके प्रमुख शहर इन्दौर से लिया गया है। इसका ठीक नाम इन्द्र है। यह इन्द्रेश्वर या इन्द्रपुर का अपभ्रंश (बिगड़ा हुआ रूप) है। इन्द्रपुर उस गांव का नाम था जहाँ आज इन्दौर शहर बसा हुआ है। शहर के बीच में अब इन्द्रेश्वर का मंदिर बना हुआ है। इसी मंदिर के नाम पर उस गाँव का नाम इन्द्रपुर रक्खा गया था।

भू-रचना—मध्य भारत के तीन प्राकृतिक भाग किए जा सकते हैं-(१) पठार वाले प्रदेश (२) पहाड़ी प्रदेश (३) निचले मैदान। इन्दौर राज्य इन तीनों भागों में फैला हुआ है। उसका ४,३२१ वर्ग मील पठारी प्रदेश है और ५,१४३ वर्ग मीलों में पहाड़ी प्रदेश फैला हुआ है। केवल आलमपुर परगना (जो कि ३६·७५ वर्ग मील है) निचले प्रदेश में स्थित है।

पठार वाले प्रदेश में रामपुर-भानपुर और महीदपुर के भाग भी शामिल हैं। यह एक तंग पहाड़ियों की पेटी (शृंखला) है जो रामपुर-भानपुर की उत्तरी सीमा बनाती

है। इस प्रकार से यह भाग पहाड़ी प्रदेश भी कहा जा सकता है। यह देश मालवा से बहुत कुछ मिलता जुलता है। यहाँ की पहाड़ियों पर चौरस मैदान बहुत मिलते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि खूब चौड़ी भूमि ऊपर से लुढ़कती आ रही है जिसे ये मैदान रोक लेते हैं। दकन के पठार में ऐसे मैदान अधिकता से पाये जाते हैं।

यहाँ की भूमि बहुत उपजाऊ है। विशेषतः काली मिट्टी के यह प्रदेश कपास की उपज के लिए बहुत उपयोगी है। यहाँ पोस्ता की उपज बहुतायत से होती है। जहाँ किसी भी चीज की खेती नहीं होती, वहाँ अच्छे अच्छे चरागाह हैं। यहाँ जंगल नहीं हैं और बड़े बड़े वृक्ष भी केवल पुराने गाँवों और खेतों के किनारे देखने को मिलते हैं। इन स्थानों पर ढाक और दूसरे उसी प्रकार के वृक्ष आमतौर से पाये जाते हैं। यहाँ के किसान भी बहुत परिश्रमी होते हैं और उन्हें कपास तथा पोस्ता की उपज सम्बन्धी जानकारी भी खूब होती है।

पहाड़ी प्रदेश निमार जिले में पड़ता है और विन्ध्याचल तथा सतपुड़ा पर्वत-श्रेणियों में फैला हुआ है। यहाँ के पहाड़ी ढाल सघन वनों से ढके हुए हैं और आबादी भी छितरी-बिखरी हुई है। भील और उसी प्रकार की कुछ अन्य जातियाँ यहाँ निवास करती हैं। ये लोग खेती करना बहुत कम जानते हैं।

पर्वत-श्रेणियों के बीच नर्वदा नदी की चौड़ी घाटी है। यहाँ की अधिकतर भूमि बहुत ही उपजाऊ है और इस स्थान के रहनेवाले किसान भी उच्च श्रेणी के हैं।

निचली भूमि वाला आलमपुर परगना उपजाऊ भाग में बसा हुआ है। असल में यह केवल मल्हारराव की यादगार के रूप में स्थित है।

विन्ध्याचल पर्वत—राज्य का पहाड़ी भाग, विन्ध्याचल पर्वत श्रेणियों और उसकी शाखाओं तथा सतपुड़ा पहाड़ से मिलकर बना है। यह पहाड़ भी एक प्रकार से विन्ध्याचल पर्वत-श्रेणियों का ही भाग कहा जा सकता है। विन्ध्याचल के प्रति बहुत सी दंतकथाएँ प्रचलित हैं। उनमें से एक कथा बहुत प्रसिद्ध है। लोगों का कहना है कि विन्ध्याचल को मेरू की चोटी से ईर्ष्या थी और वह उंचाई में उससे बढ़ जाना चाहता था, लेकिन उसे अगस्त मुनि के कारण नीचा देखना पड़ा। इसकी प्रमुख श्रेणी जो एकाएक मालवा पठार की ओर मुड़ जाती है, समुद्र के धरातल से लगभग १,६०० फुट ऊंची है। मोटे तौर से यह राज्य के आर-पार पूर्व से पश्चिम तक फैली हुई है। यह सबसे पहले राज्य के नेमावर परगने में प्रवेश करती है और उस जिले की उत्तरी सीमा बनाती है) पश्चिम में जानापाव पहाड़ी है जहां से चम्बल और गम्भीर नदियाँ निकलती हैं। इसके

ठीक सामने, मानपुर परगने की सीमा पर सिंगार चोली की सुन्दर चोटी है। मुख्य शाखा राज्य में पुराने महेश्वर नगर के कुछ मील आगे तक चली जाती है यहां से फिर वह धार रियासत में प्रवेश करती है। और आगे पश्चिम में लावानी और चिखान्दा परगने तथा दाही ठकुरात में टूटी-फूटी पर्वत श्रेणियां हैं। मुख्य श्रेणी की शाखाएं, जो कि मालवा पठार को पश्चिमी सीमा बनाती हैं, पेप्लावद परगने के बीचो-बीच फैली हुई है। इस श्रेणी की वह शाखा जो हाराउती पठार की दक्खिनी सीमा बनाती है और चित्तौर से चदेरी तक फैली हुई है, रामपुर-भानपुर ज़िले को राजपूताना से अलग करती है।

अनेकों दर्रे इन श्रेणियों के आर-पार स्थित हैं। धान तलाव उनमें से एक मुख्य दर्रा है जो नेमावर और इन्दौर को मिलाता है। बाई-घाट दर्रे से खंडवा से इन्दौर जाने वाली सड़क पठार में ऊपर चढ़ने लगती है। जाम घाट जहां कि अहिल्या बाई को जाने-वाला रास्ता चढ़ता चला गया है, बहुत मशहूर है। गारा घाट दर्रा, जहां से आगरे से बम्बई को जाने वाली सड़क गुज़रती है और भेरू-घाट दर्रा भी महत्व पूर्ण है। यह भेरू घाट दर्रा गुजरी और धार रियासत में मिलता है। यहीं से मरहठों ने मालवा में प्रवेश किया था।

इन पहाड़ियों पर टूटी-फूटी अवस्था में बहुत से पुराने किले पाये जाते हैं। उनमें से गिरासिया का किला मुख्य है। यह १८ वीं और १६ वीं शताब्दी के अनिश्चित दिनों में सुरक्षता का केन्द्र था। इन किलों में कौसल सिंह द्वारा बनवाया गया कौसलगढ़ सब से अच्छी दशा में है। रामपुर के उत्तर की पहाड़ी पर हिंगलाज गढ़, इन्द्रगढ़ और चैारासीगढ़ के खंडहर हैं।

सतपुड़ा पर्वत—असीरगढ़ किले से पश्चिम की ओर कुछ मीलों की दूरी पर इन्दौर राज्य में प्रवेश करता है। ऐसा कहा जाता है कि सतपुड़ा का अर्थ सत (सात) पुरा (तह) है। कुछ लोगों का कहना यह भी है कि यह 'सतपुड़ा' का बिगड़ा हुआ रूप है। उन लोगों के कहने के अनुसार सत पुड़ा का अर्थ है। सत (सात) पुड़ा (पुत्र) यानी विन्ध्याचल के सात पुत्र! इस पर्वत की चोटियां कहीं कहीं पर काफ़ी ऊंची हैं। लेकिन इसकी सब से ऊंची चोटी ज़िला खानदेश (ब्रिटिश) में है। ताम दीन-वली की चोटी (३,३८६) राज्य की सीमा का सब से स्पष्ट द्योतक है। यहां पर मुसलमान सन्त, ताजउद्दीन शाहवली की कब्र है जिसके कारण यह स्थान और भी प्रसिद्ध हो गया है। यहां केवल ग्वालन घाट का दर्रा, जो कि सेंदवा दर्रे के नाम से प्रसिद्ध

है, मुख्य है। इसी दर्रे से होकर आगरा से बम्बई को जाने वाली सड़क ताप्ती नदी की घाटी में प्रवेश करती है। इन पहाड़ियों में बहुत से किले भी हैं, किन्तु केवल बीजागढ़ और सेंदवा उल्लेखनीय हैं। यह बीजागढ़ का किला सम्राट अकबर के समय में एक सरदार का मुख्य नगर था। इस स्थान के आस पास अब भी ऐसे चिन्ह मिलते हैं जिनसे पता लगता है कि यह पहले बहुत घना बसा हुआ था। अब भी वहां मुसलमानी इमारतों के खंडहर मिलते हैं। इसके अलावा बहुत से पत्थरों के बने हुए चीनी बनाने में कारखानों के शेष चिन्ह भी मिलते हैं।

नदियां और झीलें—इन्दौर राज्य की नदियां दो भागों में अलग की जा सकती हैं। पहले भाग में चम्बल तथा उसमें गिरने वाली गम्भीर, सिपरा और छोटी तथा बड़ी काली सिन्ध नदियां आती हैं और दूसरे में नर्वदा तथा उसकी अन्य सहायक नदियां। सेमाई और दाहूज नदियां अलमपुर परगने को छूती हुई बहती हैं। ये दोनों सिन्ध की सहायक नदियां हैं।

इनमें से केवल नर्वदा नदी कुछ दूरी तक व्यापार के लिए उपयोगी है। अन्य बड़ी बड़ी नदियों से तो सिंचाई का भी काम अधिक नहीं लिया जा सकता क्योंकि उनके तट बहुत ज़्यादा ढालू हैं। फिर भी कुछ छोटी छोटी नदियों का उपयोग इस काम में किया जाता है।

चम्बल नदी—विन्ध्याचल पर्वत के जानापाव चोटी से निकलती है। यहां पर जनमेश्वर का छोटा सा मन्दिर और एक तालाब बना हुआ है। प्रत्येक वर्ष कार्तिक के महीने में यहां एक मेला भी होता है। इस नदी का पुराना नाम चर्मवती है। 'चम्बल' इसी का बिगड़ा हुआ रूप है। यह हासलपुर, बेतवा और दयालपुर परगने से होकर बहती है। यहां इसकी लम्बाई कुल लगभग ४० मील होगी। इसके बाद वह इन्दौर राज्य से बाहर निकल जाती है और फिर ज़िला रामपुर—भानपुर पहुँच कर अमला गांव से राज्य की सीमा में पुनः प्रवेश करती है। यह गांव चंदवासा परगने में है। यहां से वह फिर राज्य की सीमा के भीतर ५८ मील की दूरी तक बहती है। इस प्रकार से बहती हुई वह रामपुर और भानपुर परगनों की सीमा निर्धारित करती है। अन्त में वह चौरासीगढ़ के चन्दावत नामक एक पुराने गढ़ के पास राज्य की सीमा से फिर बाहर हो जाता है।

सिपरा नदी—सिपरा या दिपरा काफी प्रसिद्ध नदी है। इसका कारण यह है कि इसी के किनारे उज्जैन का पवित्र नगर बसा हुआ है। यह इन्दौर राज्य में स्थित कोकरी नदो नामक पहाड़ी (२,०७१ फुट) से निकलती है। यह पहाड़ी उजैनी और मुर्ला गांवों

के बीच, तिल्लौर से लगभग तीन मील उत्तर-पूर्व में है। परगना इन्दौर और ग्वालियर तथा देवास के बीच की सीमा बनाती हुई, यह नदी उत्तर-पूर्व की दिशा में बहती है। खाकरिया के पास यह राज्य की सीमा से बाहर निकल जाती है, लेकिन ५० मील की दूरी पर फिर राज्य के मेहीदपुर परगने में प्रवेश करती है। वहां वह मेहीदपुर के नगर से होकर बहती है। इस प्रकार से वह लगभग ३० मील और राज्य की सीमा के भीतर बहती है। अन्त में यह नदी सिपौरा के पास चम्बल नदी में जा मिलती है।

खान नदी—इसी सिपरा नदी की एक सहायक नदी खान है जो उमरिया गाँव (२२° ३६' ३०-७५° ५८' पू०) के पास से निकलती है। यह इन्दौर शहर में होकर बहती है और असरावद, राला-मंडल, लिम्बोदी, पाल्दा और चिताव्द में गांवों से होती हुई रेसीडेन्सी क्षेत्रों में प्रवेश करती है। यहां इस नदी द्वारा एक कृत्रिम झील बनाई गई है। लगभग दो मील आगे चलकर इसमें एक छोटा सा जल-स्रोत, सरस्वती आ मिलती है। यह माछला नामक गाँव (२२° ३७' ३०—७५° ५६' पू०) के पास से निकलता है। खान नदी का पानी नल द्वारा शहर में प्रयोग होता है। जिस स्थान पर सरस्वती इससे मिलती है, संगम नाथ का एक छोटा सा मन्दिर

बना हुआ है। सानवेर के पास इसमें कातकिया नामक नाला गिरता है। ६ मील और आगे चल कर यह राज्य-सीमा से बाहर हो जाती है और अन्त में गोला नामक गाँव के पास सिपरा में जा गिरती है।

बड़ी काली-सिंध नदी—यह नदी बागली में बरझीरी से निकलती है। फिर लगभग १२ मील तक यह सन्दरसी परगने में बहती है। इसके पश्चात् वह पुनः इन्दौर राज्य के माछलपुर परगने में प्रवेश करती है और वहां लगभग ३५ मील बहती है। इस नदी में प्रायः वर्ष भर पानी रहता है।

छोटी काली-सिंध नदी—यह भी चम्बल की ही एक सहायक नदी है। यह देवास की रियासत में सिया नामक गांव (२३°२′ उ०—७६°११′ पू०) से निकलती है। वह गांव आगरा से बम्बई को जाने वाली सड़क के किनारे बसा हुआ है। भतौनी के पास यह नदी इन्दौर के तारना परगने में प्रवेश करती है। फिर यह महीदपुर माकरन, और झार्डा के परगनों से होकर बहती हुई पाट पारसी के पास राज्य की सीमा को छोड़ देती है।

नर्मदा नदी—यह सुन्दर नदी, भारत की सब से पवित्र नदियों में से एक है। लगभग ११६ मील तक इन्दौर रियासत के भीतर बहता है। वहां यह महेश्वर नगर के पास से होकर गुज़रती है। यह नगर बहुत ही

पुराना है और होल्कर राज्य के आदि काल में उसकी राजधानी रह चुका है।

हिन्दू शास्त्रों के ऋगुवेद और सूत्रों में इस नदी का कहीं भी उल्लेख नहीं है लेकिन रामायण और महाभारत में अवश्य इसका नाम बार बार आता है। वायु पुराण के रेवाखंड में इस नदी के बारे में कई कथाएँ बताई गई हैं। उसमें कहा गया है कि यह नदी शिवजी के शरीर से निकली है। पहले पहल यह एक कुआंरी कन्या के रूप में पृथ्वी पर आई थी। यह बहुत ही सुन्दर और आकर्षक थी। इसका परिणाम यह हुआ कि बहुत से देवता उस पर आसक्त हो गए तथा उसके दास बन गए। शिवजी उनकी यह दशा देखकर हँसे और उसका नाम नर्मदा अर्थात् 'प्रसन्नता देने वाली' रख दिया।

यह नदी चट्टानों को तोड़ती फोड़ती बहुत ही वेग के साथ बहती है। देखने से यह उछलती-पुछलती बहती प्रतीत होती है। इसी कारण से पुराणों में इसे 'रेवा' के नाम से पुकारा गया है। इस शब्द का अर्थ है 'उछलना'।

मध्य भारत में यह नदी भारत की सब से पवित्र नदी समझी जाती है। ऐसा कहा जाता है कि स्वयं गंगा जी वर्ष में एक बार इसमें गोता लगाने के लिए आती हैं। वह एक कोयले के समान काली गाय के रूप

में आती है किन्तु लौटती है बिल्कुल श्वेत ! अर्थात् अपने सारे पापों को धोकर ! वे लोग तो यहां तक कहते हैं कि केवल नर्मदा जी का एक बार दर्शन प्राप्त हो जाना गंगा जी में स्नान करने के तुल्य है। उनका कहना यह भी है कि इस नदी के चारों ओर लगभग ३० मील के क्षेत्रफल में जितने तालाब और कुएँ आदि हैं, वे सब भी वही फल देते हैं। कहने का तात्पर्य यह कि उनमें भी स्नान कर लेने से मनुष्य अपने पापों से उसी प्रकार मुक्त हो जाता, जैसे कि नदी से। यह सब नर्मदा जी की ही महिमा है !!

यह नदी तो शिवजी के लिए विशेष रूप से पवित्र है क्योंकि यह उन्हीं के शरीर से निकलती है। इस कारण इसको 'शंकरी' अर्थात् शंकर जी की पुत्री भी कहते हैं। इस नदी में गोले, लिंग के आकार के, चिकने पत्थर बहुत मिलते हैं। वे इनको शंकर जी की मूर्ति कहते हैं और ये पूजा के काम में लाए जाते हैं। इसलिए ऐसे पत्थर ढूंढ़ ढूंढ़ कर, बड़ी मात्रा में यहाँ से निकाले जाते हैं।

सोन, टोंस और महानदी आदि नदियों की भाँति यह भी अमरकंटक के पठार से निकलती है। यह पठार रियासत रीवां में स्थित है।

इन्दौर राज्य में यह नदी छिपारन नगर के ठीक पश्चिम से प्रवेश करती है। यह नगर भोपाल में स्थित है। फिर यह लगभग ४० मील तक नेमावर परगने में बहती है। इसके पश्चात् वह फिर नीलगढ़ गांव के पास राज्य की सीमा में प्रवेश करती है और लगातार खाल-घाट तक बहती है। यह आगरा से बम्बई जाने वाली सड़क पर बसा हुआ है। यहां वह पुनः राज्य की सीमा से अलग हो जाती है। कुछ दूर बहने के बाद वह फिर ब्राह्मण गांव और चिखाल्दा के परगने तथा दही-ठकुरात की भूमि को छूती हुई बहती है, जो इन्दौर राज्य में स्थित है।

इस नदी में पूरे वर्ष भर पानी रहता है। मोर्तक्का से होकर महेश्वर तक यह बारहों-महीने व्यापार के लिए सुगम है। सहस्र धारा के झरने से हरनफाल तक भी लगभग पूरे वर्ष इसमें नाव चल सकती है। बहुत सी नदियां आकर इसमें मिलती भी हैं। इनमें गोमी, जामनर, बाग्दी धातुनी, चांदकेसर, खारी, कनार और चोरल आदि मुख्य हैं। चोरल नदी पर होल्करों द्वारा बनवाया गया एक महल भी है। खोलर, मलान, महेश्वरी, जिसपर भी महेश्वर नगर बसा हुआ है, और कारम तथा हतनी भी मुख्य हैं। ये सब नदियां नर्मदा के उत्तरी किनारे में गिरती हैं। दक्षिणी किनारे पर गिरने-

वाली नदियों में बाकत, बेदा, कुन्दी, सतक, बोरार, देव और गोई मुख्य हैं।

तालाब—इन्दौर राज्य के मुख्य मुख्य तालाब, महेश्वर, दयालपुर, हासलपुर और यशवन्त नगर के तालाब हैं। इनके अतिरिक्त राज्य में बहुत से छोटे छोटे तालाब भी भिन्न भिन्न ज़िलों में पाए जाते हैं।

जंगली जानवर—उत्तरी भारत में पाए जाने वाले जानवर ही अधिकतर इन्दौर राज्य में भी मिलते हैं। सोलहवीं शताब्दी में हाथी, राज्य के दक्षिणी ज़िलों में अधिकता से पाए जाते थे किन्तु अब तो बीजागढ़ ऐसे परगने में भी देखने तक को नहीं मिलते। सतपुड़ा पहाड़ के भागों में देशी तथा जंगली भैंसे बहुत पाए जाते थे किन्तु पचास वर्षों के भीतर ही लगभग समाप्त से हो गए हैं। मुग़ल बादशाहों के दिनों में सतवास और बीजागढ़ में हाथी खूब पकड़े जाते थे। भैंसों के समाप्त होने के बहुत से कारण हैं। इनमें से मुख्य शिकार की अधिकता ही है।

चीता, सतपुड़ा पर्वत और कनार तथा खारी नदियों की घाटी, और निमानपुर के जंगलों तथा काताफोर में पाए जाते हैं। रामपुर की उत्तरी पहाड़ियों में पहले चीता अधिकता से पाए जाते थे। तेंदुए भी कहीं कहीं पर पाए जाते हैं किन्तु ये गांव के पशुओं के लिए

बहुत ही हानिकारक सिद्ध हुए हैं। शेर नेमावर और सतपुड़ा के भागों में मिलते हैं। देशी भेड़िए और जंगली कुत्ते बहुतायत से मिलते हैं। जंगली सुअर और नील गाय सभी स्थानों पर अधिकता से पाए जाते हैं। राज्य की ओर से चीते, तेन्दुए और शेर के शिकार के लिए पारितोषिक भी दिए जाते हैं। १८९२ ई० में इन जानवरों को सब से अधिक मारने वाले को १,३०९) पारितोषिक के रूप में दिया गया था।

रेंगनेवाले जानवर और कीड़े-मकोड़े—रेंगनेवाले जानवरों में ज़हराले सर्प और तालाबों तथा नदियों में घड़ियाल पाये जाते हैं। यहां अनेकों प्रकार के कीड़े-मकोड़े मिलते हैं। तरह तरह की तितलियां भी अधिक मात्रा में मिलती हैं। टिड्डियां, हानि पहुँचानेवाले कीड़ों में मुख्य हैं। ये झुण्ड के झुण्ड में निकलती हैं और देखते ही देखते सारे हरे भरे खेत को चट कर जाती हैं। लेकिन इनका झुण्ड बहुत कम निकलता है।

जलवायु—जलवायु के अनुसार हम इसके तीन भाग कर सकते हैं। पहला—मालवा का वह भाग जिसमें उसका मुख्य नगर और मध्यवर्तीय ज़िले हैं।

दूसरा—मालवा का पठार।

तीसरा—नर्मदा की घाटी। यह अधिकतर पहाड़ी है और यहां बहुत कड़ी गर्मी पड़ती है।

मालवा के किसानों ने वर्ष को तीन भागों में बांट लिया है। फाल्गुन, चैत्र और बैशाख गर्मी के महीने कहे जा सकते हैं। सावन, भादों और कुँआर में पानी बरसता है, इसलिए इसे बरसात की ऋतु कहते हैं। अगहन, पूस और माघ के महीनों में जाड़ा पड़ता है।

सब से अधिक वर्षा मालवा के ज़िलों में होती है (३०")। इसके बाद रामपुर-भानपुर के पहाड़ी भाग का नम्बर आता है (२४")। निमार के पहाड़ी भाग में केवल २०" पानी बरसता है।

यहां बड़े बड़े भूकम्प और बाढ़ आदि बहुत कम आते हैं। हां, छोटी छोटी बाढ़ें अवश्य कभी कभी आ जाती है जिससे अधिक से अधिक केवल निकटवर्तीय स्थानों में कुछ क्षति हो जाती है।

संक्षिप्त इतिहास

प्रारम्भिक इतिहास—होल्कर धाँगर अथवा गड़ेरिया जाति के हैं। ऐसा लगता है कि उनके पूर्वज मथुरा के पास के रहने वाले थे और दक्षिण में आकर बस गये थे। पहिले तो वे चित्तौड़ के पास मेवाड़ में बसे, फिर और दक्षिण की तरफ चलकर गाबाद ज़िले में आये। बाद में, फल्तान परगना में नीरा नदी के किनारे हाल अथवा होल गाँव में बस गये। फल्तान परगना पूना से ४० मील दूर निम्बालकर के क्षेत्र में है। यहीं पर मलीबा की ग्यारहवीं पीढ़ी में खाँडो जी होल्कर थे। यह गाँव के छोटे मुखिया थे और साधारण किसानों की तरह जीवन व्यतीत करते थे। इनका एकलौता लड़का मल्हारराव होल्कर था। यहीं मल्हार राव होल्कर इन्दौर घराने का संस्थापक था।

मल्हारराव होल्कर (१७२८-६६)—मल्हार राव का जन्म अक्टूबर १६९४ में हुआ। पिता की मृत्यु के बाद उसकी माँ खान्देश के तलौदा गाँव में चली गई। यहाँ उसके मामा भोजराज बरगल रहते थे। इनकी स्थिति अच्छी थी। ये अपने मालिक सरकार कदम बाँदे के घोड़ों की देखरेख करते थे। मल्हार राव ने भी यह काम शुरू किया। इसी समय उसकी शादी गौतम बाई से हुई। गौतम बाई उसकी चचेरी बहिन थी। गौतम बाई के भाई नारायन ने उदयपुर के राजा के यहाँ काफी उन्नति की और बुद्ध नाम का गाँव उसे जागीर में मिला इसका आध्य उसने अपनी बहिन गौतम बाई को दे दिया। बहिन ने अपने पति के नाम पर इसका नाम मल्हार गढ़ रक्खा।

मल्हार राव बहादुर आदमी था। पेशवा उससे प्रसन्न रहने लगे। सन् १७२४ में पेशवा ने मल्हार राव को अपने यहाँ नौकर रख लिया और उसे ५०० घोड़ों की अधिनायकता दे दी। सरदार कदम बाँदे ने प्रसन्न होकर इस नौजवान को अपने घोड़े और झण्डे के आगे चलने की आज्ञा दे दी। बाँदे घराने का झण्डा तिकोना लाल, सफ़ेद होता था। होल्कर घराने का झण्डा आज भी इसी तरह का है।

इस समय मरहठों की शक्ति बढ़ती जा रही थी। बाला जी विश्वनाथ १७२० में ही मर चुके थे। उसके योग्य पुत्र बाजीराव ने मरहठा साम्राज्य का और भी अधिक विस्तार किया। मालवा उसकी आँखों में चढ़ा था। उधर जब कि निज़ाम अपने भांजे हामिद खाँ से झगड़ रहा था, बाजीराव ने, होल्कर, सिन्धिया और धार के पवाँर को मालवा पर कर लगाने को आज्ञा दे दी। उस कर में से चौथ और सरदेश-मुखी पूने आने को निश्चित हुआ।

मल्हार राव ने इस सुअवसर को हाथ से जाने न दिया उसने नर्वदा के पास के मालवा के हिस्सों को रौंदना शुरू किया। जब कि काफ़ी लड़ाइयों के बाद मालवा मरहठों के हाथ में आ गया, उसी समय होल्कर ने उस पर जोरों से धावा किया। बाजीराव १७३५ में दक्षिण चला आया, लेकिन होल्कर आगरे तक धावे मारता रहा। १७३६ में वह बाजीराव के साथ दिल्ली गया और सिन्धिया से मिलकर दिल्ली शहर के पास ही मुग़लों की एक बड़ी सेना को हराया १७३९ में निज़ाम को बाजीराव ने भोपाल में हराया। इस लड़ाई में मल्हार राव ने बड़ा हिस्सा लिया। १७२८ में मल्हार राव को मालवा में १७ जिले मिल चुके थे। १७३१ में बढ़कर इनकी संख्या ८१ तक पहुँच गई थी। उसके हाथ में मालवा का साधारण प्रबन्ध

भी सौंप दिया गया था। उस समय पेशवा धार के पवाँर राजा उदाजी की बढ़ती हुई शक्ति को रोकना चाहता था। इसलिये उसने होल्कर को मालवा का प्रबन्ध सौंपा था।

मल्हार राव ने नर्बदा के दक्षिण की कुछ भूमि पहिले ही से अपने अधिकार में कर ली थी। इसी में महेश्वर नामी नगर है, जो कि लगभग १९१८ तक होल्कर साम्राज्य की राजधानी रहा। इन्दौर तो मन्दा सोर सुलहनामें के बाद राजधानी बना।

मल्हार राव लगातार निज़ाम, पुर्तगालियों, सहिल्लों आदि के विरुद्ध धावे बोलता रहा। इसलिये उसकी शक्ति और साम्राज्य दिनों दिन बढ़ते रहे।

१७४३ में जयपुर के राजा सवाई जयसिंह की मृत्यु हो गई। उन्होंने ही बाजीराव का अधिपत्य मालवा पर कराया था। इसके दोनों लड़कों माधव सिंह और ईश्वरी सिंह-में गद्दी के लिये झगड़ा हुआ। माधव सिंह और उसके दादा ने होल्कर से सहायता माँगी। ईश्वरी सिंह अन्त में विष खाकर मर गये और होल्कर को माधव सिंह ने उसकी सेवाओं के लिये ६४ लाख रुपया और रामपूर-मानपूर तथा टोंक के ज़िले दिये।

१७४३ में पेशवा को मालवा की डिप्टी गवर्नरी मिली। उस सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर करने वालों में मल्हार राव भी था। शर्त यह थी कि सन्धि को किसी भी धारा को तोड़ने पर मल्हार राव बाजीराव की नौकरी छोड़ देगा। इस बात से यह स्पष्ट हो जाता है कि मल्हार राव कितना प्रभावशाली हो चुका था।

रानी जी सिन्धिया की मृत्यु के समय (१७४५) मल्हार राव के पास ७४॥ लाख की जायदाद मालवा में थी। १७५१ में मल्हार राव ने निज़ा-मुल्मुल्क के लड़के गाज़ीउद्दीन का साथ

दिया। गाज़ीउद्दीन उस समय दक्षिण का शासन सूत्र अपने हाथों में लेना चाहता था, लेकिन जब वह हैदराबाद पर अधिकार करने को सोच रहा था उसी समय मर गया। १७५४ में मल्हार राव ने गाज़ीउद्दीन के लड़के मीरशहाबुद्दीन के साथ मिलकर शाही फौज पर धावा बोल दिया और उसे मार भगाया। १७६० में अब्दालियों के हाथों वह मरते मरते बचा। १७६१ में पानीपत का युद्ध हुआ। इसी युद्ध में मरहठा शक्ति का पतन हुआ। इस युद्ध में मल्हार राव ने कोई महत्वपूर्ण हिस्सा नहीं लिया, न उसने पहिले जैसा जोश ही दिखाया।

पानीपत की लड़ाई (१७६१) सदाशिव राव भाऊ का बिगड़ैल स्वभाव था और युद्ध के समय मल्हार राव ने उसे जो राय दी वह सदाशिव को पसन्द नहीं आई। सदाशिव राव ने कहा, "मैं गड़रिये की राय नहीं सुनना चाहता।" इससे मल्हार राव को चोट पहुँची। मल्हार राव को उनको जी सिन्धिया के दाहिने तरफ़ फौज में रक्खा गया। मल्हार राव पहिले से ही असंतुष्ट था। उसे यह बात बहुत खली थी कि उसकी सेना तथा उसकी मान-मर्यादा का ध्यान नहीं रक्खा गया। जब उसने देखा कि सदाशिव राव भाऊ की सेना हार रही है तो उसने अपनी फौज को युद्ध के मैदान से हटा लिया।

मल्हारराव अब ६७ वर्ष का हो चुका था। एक छोटे से किसान के लड़के से उन्नति करके वह "दक्षिण के बहुत बड़े हिस्से, खान्देश की एक बड़ी रियासत, नरवदा की तराई और सतपुरा पहाड़ियों और जंगलों के भीतर के ज़िलों और मालवा के एक बहुत बड़े भाग का शासक हो गया था।"

पानीपत की हार के बाद वह अपनी रियासतों को संगठित और शक्तिशाली बनाने में लग गया। बाद में उसने रघुनाथ

राव के साथ मिलकर दक्षिण से वापस आकर बहुत सी रियासतों को फिर अपने अधिकार में करना चाहा। लेकिन आलमपुर में, २० मई १७६६ में, एकाएक उसकी मृत्यु हो गई। आज भी उसकी समाधि वहाँ बनी हुई है।

मल्हारराव एक सैनिक था। राजनीतिज्ञ की हैसियत से वह महादाजी सिन्धिया का समकक्ष नहीं था। लेकिन उसका शासन सफल और चुस्त रहा। वह ग़ज़ब का हिम्मती आदमी था। इसी हिम्मत और वीरता के भरोसे उस काल में उसने अपना सिक्का चारों ओर जमा लिया वह दानी और सहृदय था और उसकी दान शीलता की कहानियाँ आज तक प्रसिद्ध हैं।

मल्हाराव का एकलौता लड़का खाण्डेराव राजपूताने के धावे में मारा गया था। इसकी स्त्री का नाम अहिल्या बाई था। खाण्डेराव का लड़का मालेराव जल्दी ही मर गया। इसलिये अहिल्या बाई के हाथ में शासन-सूत्र आया।

रानी अहिल्या बाई (१७६७–९५) अपने बेटे के जीवन काल में रानी अहिल्या बाई ने शासन कार्य अच्छी तरह से चलाया। लड़के के मरने के बाद राज्य के मंत्री गंगाधर यशवन्त ने कहा कि अहिल्या बाई को होल्कर घराने के किसी लड़के को गोद ले लेना चाहिये। लेकिन अहिल्या बाई ने ऐसा नहीं किया। उसने शासन-सूत्र अपने हाथों में ले लिया। लोगों ने शुरू में उसका विरोध किया लेकिन बाद में रघुनाथ राव, महादजी सिन्धिया, आदि सभी ने उसकी बात मान ली और उसका साथ दिया।

रानी अहिल्या बाई ने काम सँभालने के लिये तुको जी राव होल्कर को रक्खा। तुको जी राव शाही घराने का नहीं था।

फौजी मामलों में उसका नाम था और सभी उससे प्रसन्न रहते थे। पेशवा ने भी नजर (१५, ६२,००० रु०) लेने के बाद उसे खिलअत दे दी। इस प्रकार दोनों ने मिलकर राज्य का कार्य-संचालन सफलता पूर्वक ३० सालों तक किया।

३० वर्ष तक रानी अहिल्या बाई और तुकोजी राव होल्कर ने जितनी सफलता पूर्वक राज्य-कार्य चलाया, उसे देखकर सभी जानकार प्रशंसा करते हैं। अहिल्याबाई की बड़ाई तो सभी इतिहासकार करते हैं। तुकोजी हमेशा अहिल्याबाई से राय लेकर काम किया करता था। दक्षिण छोड़ कर जब वह उत्तरी हिन्दुस्तान की ओर आने लगता तो वह रानी अहिल्याबाई को ही सारा राज्य भार सौंप कर आता था और रानी अहिल्याबाई-जिनके हाथ में मालवा के ज़िलों की देखभाल करना रहता था —अपने राज्य के इस हिस्से का भी शासन स्वयं करती थीं।

रानी अहिल्याबाई के शासन की प्रशंसा सरजान मालकम ने बहुत किया है। उसके काल में शासित प्रजा में सुख शांति और समृद्धि रही और लुटेरे तथा आक्रमणकारी छोटे मोटे राजे प्रजा को अधिक कष्ट नहीं दे पाये। अहिल्याबाई को शासन कार्य का अनुभव अपने ससुर मल्हारराव के शासनकाल में हुआ था। मल्हारराव हमेशा अहिल्याबाई से राय लिया करते थे और जब कभी वे बाहर जाते तो शासन का बहुत सा काम अहिल्याबाई को सुपुर्द करके जाया करते थे। अहिल्याबाई कुशाग्र बुद्धि वाली महिला थी। उनमें दम्भ और झूठा घमण्ड नहीं था वह तो हमेशा अपने काम में जुट जाती थी। वह परेशानियों और कष्टों से कभी घबराती नहीं थीं। जिनको अहिल्याबाई को पास जाने का अवसर मिला है वे सभी इस बात में एक मत हैं कि रानी अहिल्याबाई में शासन-कार्य-संचालन के सभी गुण पर्याप्त मात्रा में मौजूद थे। वह स्वयं

सच्चरित्र थी और नियमित जीवन व्यतीत करती थी। इस मामले में ज़रा भी ढील पसन्द नहीं करती थी। लेकिन दूसरों की कमज़ोरियों पर ही दृष्टि रखना उनका काम न था। रानी अहिल्याबाई क्षमा करना भी जानती थीं। उनकी सख़्ती के भीतर नर्मी की एक पुट थी। उनका शील, सौजन्य और सदाचार पक्के दर्जे का था और इसी लिये वह अपने आसपास रहने वालों पर अच्छा असर डाल सकी थी। रानी अहिल्याबाई का काम और उनका नाम मरहठा इतिहास में श्रद्धा से याद किया जाता है।

१३ अगस्त १७९५ में रानी अहिल्याबाई का देहान्त हो गया और उसके बाद शासनसूत्र तुको जी राव के हाथ में आ गया।

तुकोजीराव (१७९५-९७)—हम देख चुके हैं कि तुकोजीराव रानी अहिल्याबाई के दाहिना हाथ थे। एक बार नहीं, कई बार तुकोजीराव ने दूसरे महरहठा शासकों से बनाव बिगाड़ किया और हमेशा होल्कर घराने की शक्ति बढ़ाता रहा। तुकोजीराव, १७८५ में, टीपू सुल्तान के विरुद्ध, गनेशपंत का साथ देने के लिये भेजा गया। इसके बाद वह दक्षिण छोड़कर महेश्वर में रानी अहिल्याबाई का दर्शन करने आया। १७८८ में महेश्वर छोड़कर वह अलीबहादुर के साथ दिल्ली के पहिले सिन्धिया से मिलने गया।

इस समय तक तुको जी राव सिन्धिया की बढ़ती हुई शक्ति से जलने लगा। उसने इस बात की चर्चा रानी अहिल्याबाई के पत्रों में भी की थी। फलतः सहायता देने के बजाय उसने सिन्धिया के रास्ते में रोड़े अटकाना शुरू कर दिया। उसने यह कोशिश की कि इस्माइल बगेर और सिन्धिया में अनबन हो जाय।

तुकोजी राव ने नई फौज भी बनाई और उसे नये नये हथियारों से सुसज्जित किया। १७९२ में सिन्धिया को इस बात का पता चला कि पूना में उसके विरुद्ध षड़यन्त्र चल रहा है। राजपूताने में अभी तक सिन्धिया और होल्कर की सेनायें साथ साथ लगान वसूल कर रही थीं। लेकिन आपस में अनबन काफी हो गई और दोनों सेनाओं में मुठभेड़ हो गई। होल्कर की सेना को गहरी हार खानी पड़ी। इससे सिन्धिया का महत्व और भी बढ़ गया। तुकोजी राव ने फिर कभी उससे मुठभेड़ करने की बात नहीं सोची। यह हार केवल इसलिये हुई थी कि होल्कर की सेना की शिक्षा अच्छी नहीं थी। लेकिन उसकी स्थिति तुकोजीराव ने सुधारी। धीरे धीरे सिन्धिया की तरह होल्कर भी मरहठा साम्राज्य का अगुआ हो गया।

रानी अहिल्याबाई के मरने के बाद दो साल तक तुकोजीराव ने राज्य-कार्य संचालन किया। उस समय वह बूढ़ा हो चला था। वह १५ अगस्त १७९७ में मर गया। होल्कर घराने की कीर्ति पताका को लहराते रहने का श्रेय रानी अहिल्याबाई के बाद तुकोजीराव होल्कर ही को है। "तुकोजीराव बहादुर, सैनिक दृढ़ और निश्छल व्यक्ति था। उसकी हिम्मत और बहादुरी के सभी कायल थे। मरहठा राष्ट्र नायकों में तुकोजीराव होल्कर का स्थान बहुत ऊँचा है।

तुकोजीराव के दो लड़के थे—काशीराव और मल्हारराव। दो बिना ब्याही औरत से भी बच्चे थे—यशवन्तराव और वियोजी। गद्दी के लिये मल्हारराव और काशीराव में झगड़ा हुआ। मल्हारराव ने पेशवा से अपील की और काशीराव सिन्धिया की शरण में गया। सिन्धिया ने अवसर अच्छा देखा और मौका निकालकर मल्हारराव पर हमला कर दिया। इस हमले से मल्हारराव की सेना बिल्कुल नष्ट हो गई। मल्हारराव मारा

गया, साथ में उसके बेटे खाण्डेराव को सिन्धिया ने गिरफ्तार कर लिया। यशवन्तराव और बियोजी भाग निकले।

यशवन्तराव (१७६८–१८११)—काशीराव को भगाकर गद्दी अपने अधिकार में करने का प्रयत्न यशवन्तराव ने शुरू किया। उसने सिन्धिया के यहां बन्द मल्हारराव के लड़के खाण्डे को गद्दी का मालिक करार दिया और इसी बहाने से लड़ने की तैयारी की। पहिले युद्ध में भागने पर वह नागपूर के शासक के यहां ६ महीने क़ैद रहा। बाद में वह खान्देश भाग गया और एक भील नेता के यहां शरण ली। उसी समय पिण्डारियों के हमले से उसने रियासत को बचाया। लेकिन मल्हारराव को घर छोड़कर भागना पड़ा। भागने के समय यशवन्तराव के पास थोड़ा सा रुपया, १४ घुड़सवार और ११२ सिपाही थे। लेकिन तब भी उसने इसी सेना के बल पर दीपालपुर पर हमला कर दिया और उसे जीत लिया। फौरन उसका नाम हो गया और उसके पीछे चलने वालों की संख्या बढ़ गई। लेकिन यशवन्तराव अपनी स्थिति को जानता था, इसलिये उसने गद्दी के लिये कोई दावा नहीं पेश किया जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं, उसने मल्हारराव के लड़के खाण्डेराव होल्कर का समर्थन किया।

बाद में यशवन्तराव के साथ सारंगपूर के वज़ीर हसन और अमीर खां भी हो गये। उनके ही वंशज आज भी टोंक रियासत के राजा हैं। यशवन्तराव का सितारा ऊपर उड़ रहा था उसने माहेश्वर जाकर काफ़ी रुपया लिया और अपनी सेना को वेतन दिया। वहां से वह मालवा को रौंदने के लिये आगे बढ़ा। जहां कहीं भी रास्ते में रियासतें मिली सब पर उसने कर लगाये। उसने सिन्धिया की आधी रियासत को चौपट कर दिया। इस समय (१७९९) सिन्धिया की फौजें आगरे में लड़ रही थीं। सिन्धिया स्वयं पूना में फँसा हुआ था।

त्रियोजी होल्कर एक लड़ाई में पेशवा के हाथों में आ गया। पेशवा ने एक भी न सुनी और उसे क़त्ल कर दिया। बाजीराव ने उसे हाथी के पैरों बंधवा कर घसीटवाया जिससे रगड़ रगड़ कर वह मर गया। यशवन्तराव ने पेशवा को फिर कभी क्षमा नहीं किया।

होल्कर और सिन्धिया में छिड़ गई। बरहान पुर में सिन्धिया पहुँच चुका था। वहां से उसने मेजर हेसिंग को एक बड़ी सेना लेकर भेजा। सिन्धिया होल्कर की सेना को बहुत शक्तिशाली समझता था, इसलिये उसने उसे हराने के लिये काफ़ी तैयारी की थी। हेसिंग मैदान से भाग निकला और उसने भैरोगढ़ के किले में शरण ली। सिन्धिया की सेना को गहरी हार हुई और १२ अँग्रेज अफसरों में से एक हेसिंग बच पाया।

होल्कर की शान इस जीत से बहुत बढ़ गई। सिन्धिया तिलमिला उठा। फिर लड़ाई हुई और सिन्धिया ने पूरी शक्ति के साथ हमला किया अबकी बार यशवन्तराव होल्कर की गहरी हार हुई। वह अपने हथियारों व और सामानों को छोड़ कर भागा। अब यशवन्तराव की स्थिति बहुत खराब हो गई थी। वह इतना गरीब हो गया था कि वह अपने सिपाहियों को वेतन भी नहीं दे पाता था। यशवन्तराव ने रतलाम शहर पर धावा कर दिया और काफी रुपया इकट्ठा किया। बाद में नाथ द्वारा के मन्दिर पर भी धावा कर के (१८०३ ई० में) काफी रुपया वसूल किया।

सिन्धिया ने अपनी जीत को बहुत अधिक समझा। उसने होल्कर से सुलह करनी चाही, लेकिन होल्कर की शर्तें बहुत सख़्त थीं और उन्हें मानने के लिये सिन्धिया तैयार नहीं था। इस लिये सन्धि नहीं हो सकी।

१८०३ में पेशवा को गद्दी फिर से मिल गई। उसी समय अंग्रेजों के विरुद्ध एक राष्ट्र संघ बनाने का निश्चय हुआ पिछले

मनमुटाव के होते हुये भी यशवन्तराव से सुलह की बातचीत हुई। उसके भतीजे और भतीजी को वापस कर दिया गया। मालवा को उसकी जायदादें वापस दे दी गई। उसके उत्तरी हिन्दुस्तान के अधिकार भी मान लिये गये। होल्कर ने मिय संवों का साथ देने का वादा किया, लेकिन ऐन मौके पर ख़र्चे की कमी का बहाना करके निकल गया।

इधर उसकी अन बन अंग्रेज़ों से भी हो गई। सिन्धिया की हारों से वह प्रसन्न था और जब सिन्धिया ने अंग्रेज़ों की सहायता चाही तो वह और भी चिढ़ गया यों तो दिखाने के लिये वह अंग्रेज़ों से अपना सम्बन्ध अच्छा ही रखना चाहता था और जब लार्ड लेक सन्धि करने गये तो उसके वकीलों ने कुछ शर्तें रक्खीं। इन शर्तों के देखने से पता चलता है कि होल्कर को अंग्रेज़ों के न्याय पर विश्वास न था। उसने बहुत से स्थानों से अपने पूर्वजों की तरह चौथ वसूल करने का अधिकार मांगा था, साथ ही दोआब और बुन्देलखन्ड के बारह ज़िले भी मांगे थे।

होल्कर के ऐसे पत्र भी पकड़े गये थे जिनमें अंग्रेज़ों के विरुद्ध विभिन्न मरहठा शक्तियों को संगठित होने की बात कही गई थी। १६ अप्रैल १९०४ को होल्कर पर हमला करने के लिये जेनरल लेक और वेलेलज़ली को आज्ञा मिली। उसी समय होल्कर को अंग्रेज अफ़सरों ने भी होल्कर को धोखा देना चाहा। उनको होल्कर ने मृत्यु-दण्ड दिया। ऐसे समय वह गद्दारी बर्दाश्त नहीं कर सकता था।

इसके बाद होल्कर उत्तर की तरफ़ बढ़ा। दिल्ली और फ़र्रुखाबाद में उसकी हार हुई। यह वापस होकर मेवाड़ चला गया। बरसात के बाद वह फिर उत्तरी हिन्दुस्तान में आया। लार्ड लेक उसका पीछा कर रहे थे। सिक्खों और अफ़ग़ानों से सहायता की आशा होल्कर को थी। लेकिन यह आशा पूरी न

हुई। इस समय होल्कर की अवस्था ख़राब थी। सिन्धिया की सेनाओं ने अंग्रेज़ों के मित्र की हैसियत से इन्दौर और दूसरे स्थानों पर अधिकार कर लिया। सब तरफ़ से परेशान होकर उसने लार्ड लेक के पास प्रतिनिधि भेजा। कर्नल माल्कम के द्वारा राजपूत घाट में २४ दिसम्बर १९०५ को होल्कर और अंग्रेज़ों में सन्धि हो गई।

इस सन्धि के अनुसार होल्कर ने टोंक, बुंदी और बुंदी पहाड़ियों के उत्तरी हिस्सो और बुन्देलखण्ड से अपना अधिकार हटा लिया। उसने वादा किया कि वह अंग्रेज़ों को अपने यहां फ़ौज में नौकर नहीं रक्खेगा। अंग्रेज़ों ने वादा किया कि होल्कर के अधिकार में चम्बल के दक्षिण के सारे स्थान और दक्षिण के दूसरे भाग भी रहेंगे। टोंक होल्कर को फिर मिल गया।

उत्तरी भारत से लौट कर यशवन्तराव ने अपनी सेना घटा लिया। नतीजा यह हुआ कि पठान सिपाहियों ने विद्रोह कर दिया। उन्हें शान्त करने के लिये होल्कर ने अपने भतीजे खाण्डेराव को गिरवी की तरह रख दिया और कहा कि सिपाहियों के वेतन न मिलने तक वह ऐसे ही रहेगा। पठानों ने खाण्डेराव को फ़ौरन राजा बनाने का एलान किया और इसके लिये वे पलपड़े। होल्कर ने जयपुर के राजा से रुपये लेकर उनका वेतन चुका दिया और पठान चुप हो गये। खाण्डेराव को बाद में विष दे दिया गया, जिससे उसकी मृत्यु हो गई।

यशवन्तराव का दिमाग़ अब खराब होने लगा था। जोधपुर के राजा मानसिंह ने उससे १८०८ में सहायता मांगी। जोधपुर के राजा को जयपुर के राजा के विरुद्ध लड़ाई करनी थी। होल्कर ने जयपुर के राजा से वादा कर लिया था कि वह उसका विरोध नहीं करेगा। लेकिन उसने अमीर खां को जयपुर के विरुद्ध भेजा। अमीर खां ने दोनों राजाओं को बारी बारी से धोखा

दिया। इसी समय काशीराव की हत्या की गई। इसी तरह अपने जीवन के अन्तिम दिनों में यशवन्तराव की कुशाग्रता खत्म हो चली। वह क्रोधी स्वभाव का चिड़ चिड़ा और बिगड़ैल हो गया। इसी तरह वह २८ अक्टूबर १८११ में भान पूरा में मर गया। दूसरी समाधि अब भी वहां मौजूद है।

यशवन्तराव बहादुर सिपाही थे। हथियार बहुत अच्छा चलाता था और घोड़ सवारी में तो वह फ़र्द था। जहां तक व्यक्तिगत वीरता का प्रश्न है निःसन्देह वह अद्वितीय था। विद्वान मान्ह्-भाषा-विज्ञ हृष्ट पुष्ट, सुन्दर, जीवन वाला बहादुर सिपाही-यशवन्तराव होल्कर एक ख्यात नामा सरदार हो गया है। लोग उससे घबराते भी थे और श्रद्धा भी रखते थे। व्यव-हार-कुशल, मिष्ठभावी, शौकीन तबियत, होल्कर स्वभाव से ही शासक मालूम पड़ता था। यशवन्तराव तमाम मरहठा राजाओं से अधिक तेज़, चुस्त, चालाक और कुशाग्र-बुद्धि वाला था। होल्कर घराने के लोगों में यशवन्तराव का स्थान बहुत ऊंचा है और उसको लोग अब भी याद करते हैं।

रानी तुलसी बाई (१८०८–१७)—यशवन्त राव जब शासन के योग्य नहीं रह गये तो राज्य का काम मंत्री बालाराम सेठ के सर पड़ा। बालाराम तुलसी बाई से राय लेकर काम किया करता था। तुलसी बाई एक खेल की लड़की थी। वह देखने में सुन्दर, विद्वान्, कुशाग्र बुद्धिवाली, व्यवहार कुशल महिला थी। १० साल तक तुलसी बाई ने होल्कर घराने का कार-बार सँभाला। यशवन्त राव के मरने के पहिले तुलसी बाई ने मल्हार राव को गोद ले लिया लेकिन तमाम गुणों के होते हुये भी तुलसीबाई राज का काम पूरी तौर से चला न सकी और विश्रृङ्खलता फैल गई।

मल्हारराव द्वितीय (१८११-३३)—के जमाने में काफ़ी गड़बड़ी रही। इस समय सच तो यह है कि राज्य में कोई व्यवस्था नहीं थी। अराजकता, लूटपाट, धावों आदि का ज़ोर शोर था। इसलिये कर वसूल करने में बड़ी दिक्क़त होती थी। तलवार के ज़ोर पर लगान वसूल होता था। राजा प्रजा के अधिकारों का कुछ पता ही न था। इसी बीच में पेशवा ने अँग्रेज़ों के विरुद्ध एक सेना संगठित की और लड़ाई की तैयारी शुरू की। तुलसीबाई चाहती थी कि अँग्रेजों से सुलह रहे। लेकिन उसके फौजी सरदार ऐसा नहीं चाहते थे। दोनों में झगड़ा हो गया। २० अक्टूबर १८१७ को सरदारों ने मल्हार-राव को तुलसी बाई की संरक्षणता से हटा लिया। रात को तुलसीबाई की गर्दन काट ली गई।

उसी दिन अँग्रेज़ी फ़ौज सीमा के भीतर ७ मील तक घुस आई। उसे होल्कर की तरफ़ से चुनौती दी गई और कहा गया, "याद रक्खो, यह होल्कर की सेना है" इस लड़ाई में होल्कर की बुरी तरह हार हुई। मल्हार राव हाथी पर बैठा हुआ अपनी फौज को भगाते हुये देख रहा था। वह रो पड़ा। इस लड़ाई के बाद मन्दासोर की सन्धि हुई (१७ जनवरी—१८१८) में होल्कर की जितनी भी रियासत नर्वदा के दक्षिण में थी, वह निकल गई। मल्हार राव की माँ केसरीबाई ने तात्याँ जोग को मंत्री रक्खा।

इस लड़ाई के बाद राज्य में कुछ शान्ति आई। इन्दौर अब निश्चित रूप से राजधानी बना दिया गया। अप्रैल १८२६ में तात्याँ जोग की मृत्यु हो गई, जिससे होल्कर को बहुत हानि हुई। मल्हार राव स्वयं कमजोर आदमी था और हमेशा दूसरों के इशारे पर नाचा करता था। राज्य की हालत फिर बिगड़ने

लगी। इस समय अपना व्यक्तिगत धन लगाकर केशरी बाई ने राज्य का काम सँभाला। २७ अक्टूबर १८२३ को मल्हार राव मर गया।

मल्हार राव के बाद मार्तनुराव, आया। इसके ज़माने में कोई विशेष बात नहीं हुई। इसके बाद होल्कर की गद्दी पर हरीराव (१८३४-४३) आया। हरीराव ने अपना मंत्री रेवा जी फाँसे को बनाया। कुछ दिनों तक काम ठीक से चला, लेकिन फ़ौरन ही गड़बड़ी मच गई। लगान में ७ लाख का घाटा लगा। २४ लाख ख़र्चा बढ़ गया। उधर रेवा जी फाँसे ने राज्य पर अपना पूरा अधिकार जमा लिया और हरीराव उसके हाथ की कठपुतली बन गया। अन्त में रेवा जी को इस्तीफ़ा देने के लिये मजबूर किया गया। कई बार हरीराव ने नये नये मंत्री रक्खे। जब उसका स्वास्थ्य ख़राब हो गया और वह किसी काम लायक नहीं रह गया, तब उसने ११ वर्ष के लड़के खाण्डेराव को गोद लिया। अँग्रेज़ों ने भी खाण्डेराव को ही गद्दी का हक़दार माना। साल भर तक खाण्डेराव गद्दी पर रहा।

इसके बाद तुको जी राव द्वितीय (१८४४-८६) गद्दी पर आया। इसके ज़माने में सबसे महत्वपूर्ण घटना १८५७ की ग़दर थी। इस समय शुरू के दिनों में मध्यभारत में शान्ति थी। लेकिन तीन हफ़्ते बाद ही ग़दर की आग भड़कने लगी और अँग्रेज़ों ने होल्कर से सहायता माँगी। होल्कर ने सहायता दी। लेकिन उसकी फौज उसके कहे में नहीं थी, इससे बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। फौज ने बिगड़ कर अँग्रेज़ी अफ़सर ड्यूरफ का मकान घेर लिया। किसी किसी प्रकार शान्ति स्थापित हुई। ड्यूरफ पहिले तो होल्कर पर शंका करता था, लेकिन बाद में उसकी शंका मिट गई। होल्कर अँग्रेज़ों का मित्र साबित हुआ।

इस ज़माने में अँग्रेज़ों ने अपना प्रभुत्व अच्छी तरह से होल्कर पर जमाया। सारे राज्य को फिर से संगठित किया गया। कई नई नई रियासतें होल्कर राज्य में मिलाई गईं। कुछ आमदनी होल्कर की बढ़ी। १८६५ में ग़दर में सहायता करने के लिये, २८८ लाख रुपया होल्कर को दिया गया।

ऊपर होल्कर घराने का इतिहास थोड़े में देने का प्रयत्न किया गया है। ग़दर के बाद अँग्रेज़ों का पूरा प्रभुत्व होल्कर राज्य पर हो गया और होल्कर घराने से पुरानी मरहठी परम्परा चली गई।

१८६१ में होल्कर महराज को G.C.S.I की उपाधि मिली। १८६२ में सनद मिली और यह अधिकार मिला कि वह जब चाहे पुरुष उत्तराधिकारी नियुक्त कर सकता है। १८६९ में होल्कर स्टेट रेलवे एक करोड़ रुपये खर्च करके बनी। धीरे धीरे भूमि प्रबन्ध में सुधार हुआ। लगान का फिर से निश्चय हुआ। ठाकुरों और दूसरे मनसबदारों की उपाधियाँ बदलीं और बढ़ाई घटाई गईं। १८७२ तक राजा स्वयं अपना मंत्री होता था। बाद में मंत्री भी स्थायी रूप से रक्खे जाने लगे। १९७० में महाराज दिल्ली दरबार में गये।

तुको जी राव १८८३ में मर गये और उनके बड़े लड़के शिवा जी राव गद्दी पर बैठे। शिवा जी सन् १९०३ तक शासन करते रहे। वह १८८७ में महारानी विक्टोरिया की स्वर्ण जयन्ती में शामिल होने विलायत गये थे।

जन-संख्या

१८९१ की जन-गणना के अनुसार यहां की जन-संख्या १०,९९,९९० थी। १९०१ की जन-गणना के समय वह घट कर केवल ८,५०,६९० रह गई थी, अर्थात् ८९ मनुष्य प्रति वर्ग

मील। इस प्रकार इतने थोड़े से समय में अचानक जन-संख्या के घट जाने का कारण १८९९—१९०० का अकाल था।

राज्य में ३,३७९ नगर और गांव हैं। इनमें इन्दौर (८६,६८६), रामपुर (८,२७३) सनावद (७,७५०) और महेश्वर (७,०४२) मुख्य हैं। नगरों और गावों में, ३,११४ की जन-संख्या ५०० से कम है। राज्य भर में केवल इन्दौर शहर ऐसा है जिसकी जन-संख्या ५०,०००) से अधिक है। पूरी जन-संख्या में ४३७,२८२ मर्द और ४१३,४०८ औरते हैं।

यहां के लोग भिन्न-भिन्न धर्मों के मानने वाले हैं। उनमें हिन्दू, (७९%) भील (८%), मुसलमान (१४,२५५), जैन, सिक्ख और इसाई, सभी प्रकार के लोग हैं। इसी प्रकार से यहां भाषाएं भी बहुत सी बोली जाती हैं। किसान अधिकतर राजस्थानी का प्रयोग करते हैं। किन्तु नेमारी, मालवी और रांगरी बहुत प्रचलित हैं। हिन्दी, उर्दू और मारवाड़ी भी काफी बोली जाती है। केवल पूरी जन-संख्या का ४ प्रतिशत भाग शिक्षित कहा जा सकता है।

यहां के अधिकतर लोगों का पेशा खेती करना तथा भेड़-बकरी चराना है। १४२,७०५ अर्थात् १६ प्रतिशत अन्य लोग राज्य में नौकरी, स्वतंत्र व्यवसाय और मजदूरी करते हैं। इन सभी लोगों का पहनावा करीब करीब मराठा ढंग का है। ये सफेद अंगरखा या कमीज और धोती पहते हैं। सिर पर पीले या लाल रंग का साफा, जिसके सिरे पर सुनहला काम किया हुआ होता है, और कंधे पर दुपट्टे का होना यहां का मुख्य रिवाज है। किसान कमीज के स्थान पर बंडो पहनते हैं जो प्रायः खादी की बनी होती है। स्त्रियां लहंगा और लुगरा या ओढ़नी पहनती हैं। हिन्दुओं और मुसलमानों के वेश-भूषा का

अन्तर केवल यह है कि वे धोती के स्थान पर पैजामा पहनते हैं। मुसलमान स्त्रियाँ भी लंहगा के स्थान पर पैजामा ही पहनती हैं। इनका खान-पान दूसरे लोगों की ही भांति है, यानी रोटी, दाल, तरकारी और दूध तथा चीनी आदि। जन-संख्या का बड़ा भाग खेतिहर होने के कारण अपना समय अधिकतर खेतों में ही लगाता है। इन (किसानों के) मकान मिट्टी तथा फूस या छप्पर के बने होते हैं। इनको जंगल से लकड़ी काट लाने की पूर्ण स्वतंत्रता है। प्रायः इनके झोपड़ों के साथ दालान लगा होता है जिसमें ये अपने मवेशी बांधते हैं। बाल-विवाह उच्च-श्रेणी के लोगों में बहुत प्रचलित है। बहु-विवाह केवल उच्च-पदाधिकारियों तक ही सीमित है और विधवा-विवाह का केवल निम्न श्रेणी के लोगों में प्रचलन है। हिन्दुओं में मुर्दों को नदी के किनारे दाह करने की प्रथा है। मुसलमान अपने मुर्दों को भूमि में गाड़ देते हैं। दशहरा, होली और दीवाली आदि हिन्दुओं के मुख्य त्योहार हैं। इनके अतिरिक्त बहुत से स्थानीय मले भी होतेहैं। मुसलमानों के मुख्य त्योहार, ईद-उल-फितर और मुहर्रम हैं। मुहर्रम में हिन्दू भी सम्मिलित हो जाते हैं। बड़े बड़े सरदार और उच्च-पदाधिकारी ताजिया भी निकालते हैं। हिन्दू अपने लड़कों के नाम देवताओं और प्रसिद्ध व्यक्तियों के नाम पर रखते हैं। यह एक नियम सा हो गया है कि प्रत्येक हिन्दू के दो नाम होते हैं। पहला राशि-नाम होता है जो कि लड़के के उत्पन्न होने पर जन्म-पत्री के बनने के साथ साथ रक्खा जाता है। दूसरा बोल-चाल का नाम होता है जो दिन-प्रति-दिन के कार्यों में प्रयोग होता है। इन्दौर शहर तथा अन्य नगरों में सफ़ाई का काम म्युनिस्पैल्टियों के हांथ में है। किन्तु कूड़ा-करकट का ढेर घरों के द्वार पर देखने को बहुत मिलता है। बीमारियों में केवल 'प्लेग' और फेफड़े की कमजोरी आदि मुख्य हैं।

कृषि

कृषि की दृष्टि से इन्दौर राज्य को हम कई भागों में विभाजित कर सकते हैं। पठारी भाग की स्थिति मालवा के उच्च प्रदेशों की भांति है। इस भाग में इन्दौर और महीदपुर के ज़िले और रामपुरा-भानपुर का कुछ हिस्सा आता है। यहां बड़े बड़े मैदान हैं। और यहां की काली मिट्टी कपास की उपज के लिये बहुत ही उपयोगी है। जल-स्त्रोत भी यहां पर पर्याप्त है जिससे यह भूमि और भी उपजाऊ हो जाती है। वर्षा यहां लगभग ३० इंच होती और यह खरीफ तथा रबी, दोनों फसलों के लिये काफी है। केवल बहुत ही रद्दी भूमि में अवश्य दोनों फसलों का होना कठिन है।

उस भाग में जो विन्ध्याचल पर्वत के दक्षिण में है, भूमि अधिक उपजाऊ नहीं है। यहां अपेक्षाकृत नमी भी कम है, अतः रबी की फसल को अच्छी बनाने के लिए कृत्रिम साधनों द्वारा सिंचाई करने की आवश्यकता पड़ती है। पठार की अपेक्षा यहां जाड़ा कम होता है, लेकिन वर्षा कुछ अधिक होती है।

इन दोनों स्थानों के रहने वाले किसान परिश्रमी और अपने काम में निपुण हैं। विन्ध्याचल और सतपुड़ा पर्वतों के किनारे तथा रामपुर के उत्तरी पहाड़ी प्रदेश की भूमि बहुत कम उपजाऊ है। यहां वर्ष में केवल एक फसल होती है। यह फसल पानी बरस जाने पर, जब भूमि काफी नम हो जाती है, तब बोई जाती है। यहां के मुख्य निवासी भील, गोंड, कार्व, और मीना हैं। ये बहुत गरीब हैं और केवल उतनी भूमि जोतते-बोते हैं जो इनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये आवश्यक है।

ऊपर कही गई बातों के अनुसार भूमि के दो भाग बिल्कुल स्पष्ट हैं। पहली शुष्क भूमि और दूसरी नम भूमि। किन्तु वहां का किसान उनको तीन श्रेणियों में विभाजित करता है।

भूमि की बनावट के अनुसार उसके भाग हो सकते हैं-(१) चौरस, (२) ढ़ालू (३) छपेरा। यदि इस स्थिति के अनुसार उनको गौरू'-जो हिस्से गांव के निकट हैं, बारा-जो भूमि घर के निकट हो और खाद आदि के पड़ी होने के कारण खेती के योग्य हों, आदि कई भागों में बांट सकते हैं।

उपयोगिता के अनुसार उसके दो मुख्य भाग किए जा सकते हैं-रबी और खरीफ। रबी की फसल सितम्बर-अक्टूबर में बोई जाती है और खरीफ की बरसात के शुरू में। इनके अतिरिक्त उसके और भी बहुत से हिस्से किए जा सकते है। उनमें साल-भर या निचली भूमि जहां धान पैदा होता है, चरौनी या चरा-गाह और बाग मुख्य हैं। ऊपर किये गये भागों के अनुसार वहां का किसान भूमि को बांटता है। भूमि के यही भाग राज्य द्वारा भी किए गये थे, किन्तु अब गहराई के अनुसार केवल कुछ भागों में उसे बांटा गया है।

कृषि को ध्यान में रख कर वर्ष को दो ऋतुओं में विभाजित किया गया है :— (१) खरीफ (२) रबी। खरीफ कीं फसल के लिये मई के महीने में जोताई शुरू हो जाती है और अक्टूबर तक अधिकांश गल्ला इकट्ठा हो जाता है। रबी की फसल का काल अक्टूबर से प्रारम्भ होता है और अप्रैल तक रहता है। खरीफ की फसल के लिए अधिक गर्मी और अधिक सिंचाई की आवश्यकता होती है। अतः इस फसल में मोटे और सस्ते अनाज (जैसे ज्वार, मक्का, बाजरा और दाल आदि) बोए जाते हैं। रबी की फसल के लिये अपेक्षाकृत ठण्डे मौसम और थोड़ी नमी की आवश्यकता होती है। इस फसल में मुख्यतः जौ, चना और गेहूँ आदि की पैदावार होती है। राज्य के कुल १,२९७,४०० एकड़ भूमि में खेती होती है जिसमें ११४,२०० एकड़ भूमिमें खरीफ की फसल होती हैं और ३८३,२०० एकड़ भूमि में रबी होती है।

खरीफ की फसल दक्षिणी-पश्चिमी मानसून, महावत (पानी का वह झोंका जो जाड़े के मौसम में बरस जाता है) और अन्य प्रकार से की गई सिंचाई पर निर्भर रहती है।

खेतों की जुताई बैशाख में शुरू होती है। इस मास के अखा-तीज के दिन किसान अपने खेत में जा कर वहां मिट्टी के चार ढ़ेर बनाता है। फिर वह इस पर एक एक घड़ा रख देता है। इन ढ़ेरों का नाम वर्षा काल के चारों महीनों के अनुसार रख दिया जाता है। यदि ढ़ेर रात में गीला हो जाता है, तब समझा जाता है कि उस महीने में वर्षा अच्छी होगी। इस दिन उत्सव मनाए जाते हैं जिसमें गांव के सब अमीर और गरीब मिल कर गणेश देवता और 'भूमि-माता' की पूजा करते हैं। हल और बैलों की भी पूजा होती है, फिर बैलों को भी पूड़ी आदि खाने को दी जाती है। इस प्रकार के उत्सव करीब करीब सभी जगह होते हैं।

मालवा में किसान अखतीज के दिन खेत को जोतता है, फिर उसे कुछ दिनों तक यूँही पड़ा रहने देता है। इस बीच वह खेतों की सफ़ाई कर डालता है। जब मिट्टी चार-पांच दिनों में कुछ सूख जाती है तो वह उसे बोने के लिये जोतना शुरू करता है।

निमाड़ में खरीफ की फसल के बाद ही, दिसम्बर में, जोताई शुरू हो जाती है। इस समय भूमि नम होती है और जोताई सरलता से हो जाती है अन्यथा, मिट्टी सूख जाने पर इतनी कड़ी हो जाती है कि उसका तोड़ना कठिन हो जाता है। इसके पश्चात वर्षा तक और कुछ नहीं किया जाता।

पहाड़ी भागों में वर्षा के खूब हो जाने पर जोताई-गोड़ाई शुरू होती है। बोआई पानी के एक दो झोंका बरस जाने पर होती है। किसान इसके लिये गांव के पुरोहित से शुभ-घड़ी (साइत)

बिचरवाता है। इस काम के लिये उसे थोड़ा सा अनाज (सीधा) देना पड़ता है। किन्तु लगातार अकाल पड़ने और साइत के झूठा सिद्ध होने से, अब वह इन बातों पर पहले की अपेक्षा बहुत कम विश्वास करता है। वहां एक कहावत बहुत प्रसिद्ध है—'पानी परे बोना, धार आवे भगना', अर्थात् वर्षा आरम्भ होने पर फसल बोना चाहिये और डाकुओं के आने पर घर भाग आना चाहिए।

खरीफ की फसल के एक महीने के बाद रबी की फसल के लिये खेत जोत डाले जाते हैं। फिर वे वर्षा के पानी को सोखते यूँही पड़े रहते हैं। कार्तिक में उन्हें फिर से जोत कर, तब बोआई करते हैं। यदि वर्षा कम हुई और अक्टूबर तथा नवम्बर के प्रारम्भ में पानी न बरसा, तो उस वर्ष रबी की फसल नहीं बोई जाती है।

खेत को जंगली सुअर और चिड़ियां से बचाने के लिये १० या १२ फुट ऊँचा डगला बाँधा जाता है। इस पर बैठकर लड़के, गोफल से कंकड़ फेंककर या टीन पीट कर उन्हें भगाते हैं। खेत पक जाने पर उसे हँसिए से काट लेते हैं। किन्तु चने के पौधे को तो जड़ से ही उखाड़ लिया जाता है। फिर इनको गट्ठर में बांध बांध कर खलिहान में रख देते हैं। सूख जाने के बाद अच्छे और बड़े दाने वालों को बीज के लिये अलग निकाल लेते हैं।

जिस किसान के पास एक जोड़ा बैल होता है, वह २५ बीघा (१२ एकड़) भूमि खरीफ के लिए, १६—२० बीघा (१० एकड़) रबी के लिए या १० बीघा खरीफ के लिए और दस ही बीघा रबी के लिए जोत-बो सकता है।

दु—फसली यहां बहुत प्रचलित है और लगभग सभी भूमि मे बोई जाती है। गावों के पास, रानखंड में-जहां खाद आसानी

से प्राप्त हो जाती है-और उर्द बोई जाती हैं। फिर यदि नवम्बर में वर्षा हो गई तो उसी खेत में चना या मसूर आदि बो देते हैं।

निचली भूमि में जहां धान की फसल होती है, उसके कटते ही चना या अलसी आदि बो देते हैं। कहीं कहीं पर लोग गेहूँ भी बो देते हैं। सिंचाई वाले प्रदेश में तम्बाकू बो देते हैं। जहां सिंचाई आसानी से हो सकती है और खाद भी मिल सकती है या उर्द के बाद पोस्ता या गेहूँ बो दिया जाता है। कुछ जिलों में पोस्ते के पहले मूंगफली भी बो दी जाती है।

पूर्ण अकाल के डर से किसान दो चीजें एक ही साथ बो देते हैं। इसे बोजरा कहते हैं। प्रायः ज्वार को मूंग और तूअर के साथ बोते हैं। मूंग ज्वार के काटने से १५ दिन पूर्व काट ली जाती है और तूअर उसके कटने के एक मास बाद काटी जाती है। कपास उर्द और तिल के साथ बोई जाती है। पहले तिल काट लिया जाता है। इसके एक सप्ताह के बाद उर्द काटी जाती है और अन्त में कपास। गन्ना और पोस्ता अधिकतर एक साथ बोया जाता है। पोस्ता तो तीन ही चार महीने में तैयार हो जाता है किन्तु गन्ने को कटने में लगभग पूरा वर्ष लग जाते हैं। पोस्ता अकेले बोए जाने पर इसकी अपेक्षा अधिक पैदा होता है, किन्तु गन्ने की बाढ़ को रोकता बिल्कुल नहीं है।

पनवा की चलन केवल उन स्थानों में है जहां रबी और खरीफ, दोनों फसलें बोई जा सकती हैं। पहले वर्ष खरीफ बोई जाती है और दूसरे वर्ष रबी। किन्तु इन दो फसलों में, एक में किसी न किसी दाल का बोया जाना आवश्यक है।

कभी कभी खेतों को परती भी छोड़ दिया जाता है। किन्तु बहुत गरीब होने के कारण किसान पूरे वर्ष खेत को परती नहीं छोड़ सकता। अतःखरीफ और रबी की फसलों के बीच जो ६

महीने का समय मिलता है उसमें वह उसे कभी कभी परती छोड़ देता है।

मक्का—यह उन खेतों में बोई जाती है जहां सिंचाई की सुगमता है और गांव के निकट होने से खाद भी मिल सकती हो। यह पोस्ता, चना या तरकारियों के साथ बोई जाती है। पोस्ते या अन्य रबी की फसल के बाद, खेत को जोत कर अखातीज तक पड़ा रहने देते हैं। फिर असाढ़ के महीने में एक दो झोंका पानी बरस जाने पर मक्का बो दी जाती है। मालवा में प्राय: मक्के को उर्द के साथ बोते हैं। शहरों के पास मक्के को भुट्टे के लिये बोते हैं। मक्के का चारा सूखा और कड़ा हो जाने पर जानवरों को नहीं दिया जाता, किन्तु इसका हरा चारा (करबी) बहुत ही लाभदायक होता है।

मूंगफली—यह मालवा और निमार, दोनों जगह पैदा की जाती है। यह सिचाई वाले प्रदेशों में बोई जाती है। अधिकतर पोस्ते की फसल के बाद खेत को अखतीज तक पड़ा रहने देते हैं और फिर वर्षा शुरू होते ही यह बो दी जाती है। इस प्रकार से यह असाढ़ (जून-जुलाई) के महीने में बोई जाती है। इसका अकुआ आठ ही दस दिन में निकलने लग जाता है। कार्तिक तक फसल तैयार हो जाती। बीच में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती, केवल कुंआर (सितम्बर) में दो बार खेतों को सींच देना पड़ता है। एक बीघे में लगभग १२ से १८ मन तक मूंगफली पैदा होती है। इसकी पत्तियां और डंठल जानवरों के खिलाने के काम में आते हैं। इससे तेल भी निकाला जाता है और बचा हुआ हिस्सा (खली) जानवरों के लिए बहुत ही लाभदायक होता है।

गेहूँ—इस फसल की तैयारी अखतीज से आरम्भ होती है। यह सिंचाई वाले प्रदेशों में ही अधिकतर बोई जाती है।

इसके लिये खाद की कोई विशेष आवश्यकता नहीं होती। बोने से पहले बरसात में खेत को तीन बार जोत लेते हैं। इसकी बोआई कार्तिक (अक्टूबर-नवम्बर) के महीने में होती है। एक बीघे खेत के लिये लगभग ४०, या ५० सेर बीज की आवश्यकता होती है और इसकी उपज काली मिट्टी में बहुत अच्छी होती है। ४ से १२ मन तक गेहूं एक बीघे में पैदा होता है। यह कहीं कहीं चना या अलसी के साथ भी बोया जाता है।

चना—इसकी उपज गेहूँ की ही भांति होती है, केवल अन्तर यह है कि चना अपेक्षाकृत छिछली भूमि में हो सकता है। अकुए के बड़ा होते ही उसकी फुनगी तोड़ ली जाती है। इसका साग बनता है और सुखाकर भी रक्खा जाता है। चना जानवरों के खिलाने के काम भी आता है। इसका भूसा भी जानवरों के लिये बहुत ही लाभप्रद होता है।

गन्ना—इसके फसल की भी तैयारी अन्य फसलों की ही भांति अखातीज से आरम्भ होती है। इसको काफी खाद की आवश्यकता होती है। एक बीघे में लगभग बीस गाड़ी खाद डालनी पड़ती है। असाढ़ के महीने में, दो तीन झोंका पानी बरस जाने पर यह बो दिया जाता है। इसके बीच में लगभग पांच बार गोड़ना और ढ़ेलों को फोड़ कर भूमि बराबर करना पड़ता है। वर्षा के पूर्व और पाश्चात् हर ८ वें, १० वें सिंचाई करनी पड़ती है। इसके साथ अधिकतर पोस्ता बोया जाता है। ऐसी दशा में पोस्ते की फसल अच्छी नहीं होती। इसके पकने में लगभग पूरे १२ महीने लग जाते हैं। किसी भी खेत में दो वर्षों तक लगातार गन्ना बोया नहीं जा सकता, इसलिए बीच में पोस्ता बो दिया जाता है। गन्ने तीन प्रकार के होते हैं:—(१) ढ़ोला या सफेद (२) काला (३) पौंड़ा। सफेद गन्ना गुड़ बनाने के काम में आता है और काला गन्ना खाने

में बहुत अच्छा होता है, इसलिए इसी काम के हेतु बोया जाता है। पौंड़े के लिए खूब सिंचाई और अधिक खाद की आवश्यकता होती है। इसमें रस भी बहुत होता है और उन दोनों की अपेक्षा नर्म भी होता है इसलिए बाजार में इसके दाम भी अधिक मिलते हैं।

पोस्ता—यह अधिक़तर गांवों के निकट बोया जाता है। वहां इसकी सिंचाई भी अच्छी तरह हो जाती है। और खाद भी अधिक मिल जाती है। इसके साथ मक्का, बाजरा, उर्द, मूंगफली और तरकारियां बोई जाती हैं। इनकी फसल के बाद पोस्ते के लिए खेत तैयार किया जाता है। उन बरसाती फसलों के बाद खेत में खूब खाद डालनी पड़ती है। इसके पश्चात् खेत को क्यारियों में बांट लेते है और उसमें बीज डाल कर खुरपी से गोंड़ देते हैं।

काली तम्बाकू—किसान अपने खेत को तैयार कर लेता है, किन्तु स्वयं बोता नहीं। इसकी बोआई कुमावत जाति के लोग करते हैं। वह उन्हें बुलाकर अपना खेत ठीके पर दे देता है। इस जाति के लोगों का यही पेशा है। वे इससे अन्य वस्तुएं भी बना कर बेचते हैं।

नदी के साथ बहकर आई हुई मिट्टी इसके लिए सबसे उपयोगी है। किन्तु ऐसी मिट्टी का अभाव है, इसलिए यह गांव में पास के खेतों में बोई जाती है। यहाँ खाद भी आसानी से मिल जाती है। गाँव से दूर के खेत में बोने के लिए, उसे कम से कम सात—आठ बार जोतना आवश्यक होता है। ऐसी दशा में खाद को पर्याप्त मात्रा में डालना पड़ता है। यह तैयारी आसाढ़ (जून-जुलाई) के महीने में आरम्भ होती है। प्रत्येक बार खेत को जोतकर लगभग एक सप्ताह उसे वर्षा के लिए पड़ा रहने दिया जाता है। इसी तैयारी के

समय बीज को क्यारियों में अलग बो देते हैं। उनको वहाँ से लाकर कुमावत उन खेतों में बोता है। प्रारम्भ से इन पौधों को कड़ी धूप और वर्षा से रक्षा का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। इनको एक-एक फुट की दूरी पर कतारों में बोते हैं। ये कतारें दो-दो फुट के फासले पर बनाई जाती हैं।

फसल माघ में तैयार हो जाती है। फिर कटे हुए पौधों को धूप में सुखा लिया जाता है। इन पौधों से स्त्रियाँ पत्तियों को छाँट लेती हैं। बड़ी और छोटी पत्तियाँ अलग अलग इकट्ठी की जाती हैं। इसके बाद उनको गट्ठरों में बाँध लिया जाता है। लगभग २० दिनों तक प्रत्येक रात को इन्हें बाहर खोलकर फैला दिया जाता है। खूब सूख जाने पर, इनमें शीरा डाल दिया जाता है। गुड़ के सोख लेने पर उसकी पोथियाँ (गट्ठर) बना लेते हैं।

राज्य में पैदा की जाने वाली व्यवसायी वस्तुओं में, कपास १२५,८०० एकड़ भूमि में, तिल—३६,३०० एकड़, मसुरी—२,७५० एकड़, अलसी—२९,६४० एकड़, तम्बाकू—२,५८० एकड़ और पोस्ता ४,३०० एकड़ भूमि में बोई जाती है।

पैदा की जाने वाली अन्य मुख्य वस्तुएँ निम्नलिखित हैं :—

खरीफ—ज्वार, बाजरा, मक्का, कपास, धान, तिल, उर्द और मूँग।

रबी—गेहूँ, चना, अलसी, मसुरी, जौ, अफीम, और तम्बाकू।

तिलहन—जिनसे तेल निकाला जाता है :—

मूँगफली, अलसी, तिल, खसखस और मसुरी।

बुनाई के काम आने वाली वस्तुएँ :—

कपास, सन, और अम्बरी।

फल :—

रामफल, सीताफल, कमरख, महुआ, करौंदा, नारंगी, नीबू, जामुन, अंजीर, फालसा, आम, शहतूत, केला, अनार, इमली, आदि।

राज्य में सिंचाई कुओं और तालाबों से नहर निकालकर होती है। अधिकतर सिंचाई कुओं से ही होती है। सिंचाई वाले प्रदेश का लगभग $\frac{1}{4}$ भाग तालाबों से सींचा जाता है और शेष अर्थात् $\frac{3}{4}$ भाग कुओं से। सिंचाई विभाग से काफी कर राज्य को मिलता है. लेकिन यह कर अलग से नहीं लिया जाता। सिंचाई वाले प्रदेशों से जो कर (लगान आदि के रूप में) वसूल होता है उसमें यह भी शामिल होता है।

मालवा में पानी खूब बरसता है इसलिए वहाँ घास के बड़े-बड़े मैदान हैं। नीमाड़ और नर्वदा तथा उसकी सहायक नदियों के किनारे भी अच्छे-अच्छे चरागाह हैं। यहाँ भेड़ और बकरियों के झुण्ड के झुण्ड चरने के लिए जाते हैं। भैंस और गाय भी यहाँ बहुतायत से पाले जाते हैं। इनकी बहुत सी जातियां भी पाई जाती हैं। इनको घास के अलावा कुट्टी, भूसा और खली भी खिलाई जाती है। भैंसे को गाड़ी में जोता जाता है। बैल हल चलाने आदि कामों में काम आता है। इनकी मुख्य-मुख्य किस्में हैं:—मालवी, निमाड़ी और गोंडी आदि। इनके अतिरिक्त यहाँ देशी गधे भी पाए जाते हैं। इनसे ईंटा, खपड़े, बालू और सड़कों का कूड़ा-करकट ढोने का काम लिया जाता है। ऊँट भी यहाँ पाए जाते हैं। देशी और मारू, दो प्रकार के ये होते हैं। इनको बबूल आदि पेड़ों की पत्तियाँ खिलाई जाती हैं। मारू को मारवारी भी कहते हैं और ये राजपूताना की ओर पाये जाते है। ये देशी की अपेक्षा

अच्छे होते हैं। ऊँट लगभग २५, ३० मील रोज चल लेता है। इसको खाने के लिए चना भी दिया जाता है और इसका काम सामान ढोना है।

बहुत से ज़िलों में मवेशी-मेले भी लगते हैं। यहाँ सभी प्रकार के मवेशी बिकने को आते हैं। इन मेलों में इन्दौर, आरदा, मेहिदपुर आदि स्थानों के मेले बहुत प्रसिद्ध हैं।

राज्य के ४० प्रतिशत लोग खेती करते हैं और भेड़ बकरी पालते हैं। इन्दौर शहर को छोड़ अन्य नगरों की भी अधिकांश जन-संख्या देहात से आए लोगों की है। गावों में तो ९० प्रतिशत लोग खेती से अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। इनमें से सबके पास खेत नहीं हैं। कुछ खेतों में मज़दूरी करते और कुछ भेड़-बकरी चराने का काम करते हैं।

किसानों की दशा बहुत सोचनीय है। उन पर कर्ज़ तो सदा लदा रहता है। कोई किसान शायद ही ऐसा हो जिसके ऊपर कर्ज़ न हो। बहुतों के ऊपर बाप-दादों का कर्ज़ चला आ रहा है जो कि कभी समाप्त ही होने को नहीं आता; किसान कुछ न कुछ देता रहता है और उसके बदले में परिश्रम भी करता है. फिर भी वह ज्यों का त्यों बना ही रहता है—बल्कि उसकी गरीबी ही बढ़ती रहती है। व्याह आदि अवसरों पर भी इनके ऊपर खूब कर्ज़ लद जाता है। इन सब का परिणाम यह है कि उसकी दशा दिनो-दिन सोचनीय होती जा रही है। खाने भर को तो मिलता नहीं. फिर कुएँ और तालाबों आदि की मरम्मत कौन कराए? अच्छी फसल होने पर इनकी दशा में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हो पाता। राज्य की ओर से किसानों को तकाबी भी दी जाती है। यह एक प्रकार का मर्ज होता है जिसे कि फसल के तैयार होने पर चुकता कर देना पड़ता है।

बीज और बैल खरीदने तथा कुओं आदि की मरम्मत के लिए भी तकावी दी जाती है।

प्रजा से जितना धन लगान आदि के रूप में इकट्ठा होता है वह राज्य के खजाने में चला जाता है क्योंकि भूमि का असली मालिक राज्य का राजा होता है। यहाँ गावों में अभी तक अनाज आदि वस्तुओं के रूप में मज़दूरी देने की प्रथा चली आ रही है। खेती सम्बन्धी कामों के लिए तो अन्न ही दिया जाता है, किन्तु शहरों में पैसा देना पड़ता है। जिन स्थानों में रेल है, वहाँ की मज़दूरी अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक है। मकान आदि बनाने को लोग दूसरी जगह मज़दूरी की खोज में चले जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि मज़दूरी की दर बहुत बढ़ जाती है और कहीं-कहीं तो मज़दूर मिलना ही कठिन हो जाता है।

यहाँ राजपूतों की स्थिति अधिक खराब है। इनकी दशा दिन प्रतिदिन गिरती ही जा रही है, किन्तु फिर भी ये खेती की ओर कोई ध्यान नहीं देते। इनका कहना है कि खेती करना इनका काम नहीं है, इनका काम तो तलवार चलाना है। ब्याह आदि में ये बहुत सा धन व्यर्थ खर्च कर देते हैं। इसको रोकने के लिए हितकारिणी सभा भी खुली है लेकिन इनको भी निराश होना पड़ा है। कार्यक्षेत्र में ये सभाएँ कुछ भी न कर सकी हैं।

जंगल

इन्दौर के जंगल मध्य भारत में अन्य जंगलों की तरह के हैं। राज्य के दक्खिन-पश्चिम में, मध्य प्रान्त और खानदेश से लगे हुए जंगल बहुत घने हैं। किन्तु वर्षा की कमी के कारण राज्य के उत्तरी भाग में, रामपुर और भानपुर के जंगल उतने

घने नहीं हैं। ये जंगल उदयपुर से मिली हुई सूखी पहाड़ियों पर हैं।

राज्य के अधिकतर जंगलों की दशा बहुत बुरी है। प्रारम्भ से ही इस ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। बहुत से स्थानों पर अच्छे अच्छे चीड़ के पेड़ों को काट कर खेत या चरागाह बना लिए गए हैं। यहाँ के मुख्य जंगल निमार, नेमावर और रामपुर-भानपुर के जंगल हैं।

नेमावर के जंगलों में चीड़ के वृक्ष बहुत पाए जाते हैं। तरमीनालिया के वृक्ष भी चीड़-वृक्षों के साथ साथ पाए जाते हैं। इनके अलावा और भी बहुत तरह के वृक्ष पाए जाते हैं। यहाँ वृक्षों की ऊँचाई कभी कभी ६-७ फुट तक पाई जाती है।

निमार के जंगल खारगों और इन्दौर के परगनों में स्थित हैं। यहाँ का अधिकतर भाग पहाड़ी है, फिर भी यहाँ अच्छे जंगल हैं। विशेषतः पहाड़ी ढालों पर बन गए मैदानों के जंगल अधिक घने हैं। यहाँ भी बहुत प्रकार के वृक्ष पाए जाते हैं, किन्तु चीड़ उनमें मुख्य है। खानदेश की सीमा पर दूर तक सघन बन फैले हुए थे जहाँ चीड़ बहुतायत से पाया जाता था। किन्तु प्रजा ने यहाँ के सब से अच्छे भागों को काट कर खेत बना लिया है। भीकनगाँव की पहाड़ियों पर अब कुछ अन्जन वृक्षों को छोड़ कर और कुछ नहीं बचा है। इन वृक्षों की पत्तियाँ भी मवेशियों को खिलाई जाती हैं। इन पहाड़ियों पर पाए जाने वाले वृक्षों में सलाई और मोहनी मुख्य हैं।

इन्दौर, महेश्वर और चिखाल्दा परगनों के जंगल बहुत छोटे और निम्न श्रेणी के हैं। यहां अधिकतर ढाक, सलाई और मोहनी वृक्ष पाए जाते हैं जिनकी लकड़ी जलाने के काम आती है। नर्वदा के किनारे कुछ और आगे चल कर, मानपुर डांकने के बाद पूर्व की पहाड़ियों पर अच्छे जंगल हैं। यहाँ चीड़ के

अलावा और भी बहुत प्रकार के वृक्ष पाए जाते हैं। इन वृक्षों की लकड़ियां बहुत से कामों में प्रयोग होती हैं इस लिए इनकी माँग भी बहुत रहती है।

पेतलावद परगने की पहाड़ियां अच्छे अच्छे बनों से ढकी हुई थीं, लेकिन अकाल से वे सब चौपट हो चुकी हैं। अब वहाँ अधिकतर चरागाह हैं यहाँ बड़ी बड़ी और घनी घास पाई जाती है। यही बात मेहिदपुर और रामपुर-भानपुर परगनों के लिए भी कही जा सकती है। केवल कुछ निचली पहाड़ियों पर छोटे छोटे बन हैं यहाँ की लकड़ी जलाने के काम आती है।

रामपुर-भानपुर के जंगल बड़े तो अवश्य हैं किन्तु निम्नश्रेणी के हैं। ये अधिकतर पठार पर हैं और जमूनिया तथा कनजार्दा हिंगलाजगढ़ तक फैले हुए हैं। १८९९ के अकाल के बाद इस पठारी भाग की जन-संख्या बहुत कम हो गई है। इस पठार का अधिकतर भाग चन्द्रावत ठाकुरों की जागीरें हैं। यहाँ के जंगलों में बहुत थोड़े किस्म के वृक्ष पाए जाते हैं। अकाल और लोगों की अन्य आवश्यकताओं के कारण इनकी दशा और भी खराब हो गई है। ऊपर कहे गए १८९९ के अकाल में लगभग ५० प्रतिशत पेड़ नष्ट हो गए थे। १९०५ के पाले में भी, विशेषतः महुए को, बहुत क्षति हुई थी।

चीड़ इन्दौर राज्य का मुख्य वृक्ष है। यह यहां अधिकता से पाया भी जाता है। यहाँ तक कि उन गावों और छोटे छोटे नगरों के पास जहां अन्य प्रकार के वृक्ष बहुत दिन हुए नष्ट हो चुके हैं, यह अब भी पर्याप्त मात्रा में मिलता है। इस वृक्ष के कटाई पर विशेष रोक थी, यही कारण है कि यह इतनी अधिकता से पाया जाता है। अन्य प्रकार के वृक्षों की कमी और जंगलों की बुरी दशा का कारण यह है कि यहाँ लोग समझते थे कि जंगल कभी खत्म ही न होंगे। इस लिए बिना किसी

सोच-विचार के कटाई होती थी और उस पर किसी प्रकार की रोक भी राज्य की ओर से न थी।

जंगली प्रदेशों को कई भागों में बाटने का भी (कुछ समय हुआ) प्रयत्न किया गया है। छोटे पैमाने में आग से बचत का भी प्रबंध किया है। आशा है शीघ्र ही यह प्रबंध अधिक क्षेत्रों में फैलाया जायगा। यहाँ कुछ स्थानों में, विशेषतः सतपुड़ा की पहाड़ियों में, घास घनी और बहुत लम्बी लम्बी होती है। गर्मी के दिनों में' तेज हवा के बहने पर इससे अक्सर आग लग जाती है। इस आग से बचाव करना भी बहुत कठिन होता है।

बनों की रक्षा के लिए राज्य की ओर से कर्मचारी नियुक्त होते हैं। खेतों के बीच कहीं कहीं छोटे छोटे जंगल पाए जाते है; इनकी रक्षा करना बहुत कठिन होता है। जंगलों के पास जो लोग रहते हैं उन्हें एक रुपया फी हल देने पर, घर-गृहस्थी और खेती, दोनों कामों के लिए लकड़ी काट ले जाने की आज्ञा होती है।

इन बनों से राज्य को काफी रुपया कर के रूप में मिल जाता है। यहाँ की लकड़ी राज्य की ओर से बेची जाती है। चीड़ की लकड़ी से काफी आमदनी होती है। यहाँ जानवरों को चराने के लिए भी कर लगता है, केवल गायों को मुफ्त चरने की आज्ञा है। भेड़-बकरी आदि चराने के लिए भी कर देना पड़ता है। किसी किसी स्थान पर चरने की मनाही कर देने को कर्मचारियों को पूरा अधिकार है।

जंगलों की जो थोड़ी बहुत पैदावार होती है उसे प्रत्येक वर्ष नीलाम करके बेच दिया जाता है। लकड़ी यहाँ की मुख्य पैदावार है। इन्दौर के जंगलों में पहले बांस के वृक्ष बहुत पाए जाते थे किन्तु अब कदाचित ही कुछ स्थानों पर देखने को मिलें।

यहाँ से छाल निकाल कर भी बेची जाती है। यहां बहुत प्रकार की छाल पाई जाती है जो चीजों के बाँधने आदि के काम आती है। गोंद भी यहाँ बहुत प्रकार का पाया जाता है। गर्मी के दिनों में यहाँ की जंगली जातियाँ इसे इकट्ठा करती हैं। बीजा वृत्त से जो गोंद निकलता है, वह व्यापार के लिए बहुत लाभदायक होता है। अंजन वृत्त की नई डालियों से रस्सी बनाई जाती है। आक के वृत्त भी अधिकतर पाए जाते हैं किन्तु उनके रेशों से रस्सी बनाने का काम कभी नहीं लिया जाता।

यहां महुआ के वृत्तों की अधिकता है। इसके फल और फूल दोनों बहुत काम के होते हैं। इसे यहाँ की जंगली जातियाँ और गावों के लोग खाने के काम में लाते हैं। इसके (फल से) तेल भी निकाला जाता है जो बड़ी मात्रा में योरुप भेजा जाता है। यह तेल बहुत उपयोगी होता है। इसकी लकड़ी भी बहुत अच्छी और टिकाऊ होती है। सिराली और नीरगुर से डालयां और चटाइयां बनाई जाती हैं। खजूर की पत्तियां भी इन वस्तुओं से बनाने के काम आती हैं।

लाह पहले यहां बहुत पाया जाता था, किन्तु अब देखने को भी नहीं मिलता आज-कल ढाक के वृत्तों से लाख निकालने का प्रयत्न किया जा रहा है। यहाँ पहले आल वृत्त की जड़ से रंग बनाया जाता था, किन्तु अब नकली रंगों के बाजार में आ जाने से यह कारबार बिल्कुल बन्द हो गया है। बहुत से पेड़ों के फूल और छाल से अब भी थोड़ा बहुत रंग तयार किया जाता है। सलाई वृत्त से बड़ी मात्रा में लोहबान इकट्ठा किया जाता है, किन्तु इसे इकट्ठा करने में कोई विशेष लाभ नहीं होता। यहाँ एक प्रकार की घास होती है जिसे 'रूसा' कहते हैं। इस घास से एक प्रकार का तेल निकाला जाता है। किन्तु इसमें भी अधिक लाभ नहीं होता। खाने वाले फलों में जामुन, तेमरू, करौंदा, बेल

आदि काफी पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त खिन्नी और आम के वृक्ष गावों के पास अधिकता से पाए जाते हैं।

इन जंगलों से शहद और मोम इकट्ठा करने का अधिकार प्रत्येक वर्ष का नीलाम कर दिया जाता है। इनके पास रहने वाली जातियां इन ठीकों को ले लेती हैं। यहां की रहने वाली जातियों में भील, गोंड, कुर्क और बंजारे आदि मुख्य हैं।

यहां घास भी अधिकता से पाई जाती है। इनमें खस, रूसा दूब, मूसेल और मूंज मुख्य हैं।

इन बनों में शिकार खेलने के लिए दरबार से आज्ञा लेनी पड़ती है। बहुत से स्थानों पर रोक भी लगा दी गई और आशा की जाती है कि बहुत से जानवर जो अब बहुत कम हो गए हैं, फिर से आ जाएंगे।

खनिज-पदार्थ

राज्य का अधिकतर भाग दकन पठार के उस भाग में पड़ता है जहां खनिज पदार्थों की बहुत कमी है। अलमूनियम यहाँ कहीं कहीं पाया जाता है, किन्तु बड़ी मात्रा में इसके मिलने की आशा है। इससे काफी आमदनी होने की आशा की जाती है।

यहाँ थोड़ी मात्रा में लोहा भी पाया जाता है। पहले यहाँ धातु के कारखाने भी थे किन्तु अब वे बिल्कुल नष्ट हो चुके हैं। रामपुर में इस प्रकार के कारखाने काफी थे। लेकिन अब वे दिन प्रति दिन कम होते जा रहे हैं और यदि यही दशा रही तो कुछ ही वर्षों में बिल्कुल नष्ट हो जाएंगे।

घाटिया, काटकूट और चिराकन स्थानों पर मकान बनाने योग्य अच्छे पत्थर पाए जाते हैं।

दस्तकारी और छोटे छोटे उद्योग धन्धे

इन्दौर राज्य में दस्तकारी 'नहीं' के बराबर है। पहले मालवा में बहुत अच्छा मलमल बनता था। अब इस कारबार की दशा बहुत बुरी है और कुछ दिनों से अधिक चलने की आशा नहीं की जा सकती। इसके स्थान पर कोई अन्य उद्योग-धन्धे भी नहीं शुरू हुए हैं।

सूती कपड़ा छोटे-बड़े सभी गावों में बुना जाता है। यह कपड़ा मोटा और रूखा होता है। किसान किसी तरह इसीसे अपना काम चलाते हैं। कहीं-कहीं पर कम्बल भी बनाए जाते हैं और यह भी वहाँ के किसानों के ही काम आता है। महेश्वर नगर से एक छोटा सा कारखाना खुला है। यहाँ रंगीन साड़ियाँ और धोतियाँ बनती है। यह अधिकतर मराठा पहनावे के अनुसार होती हैं, इसलिए केवल मालवा और मध्य भारत के बाजारों में बिकती है।

इसके अतिरिक्त केवल एक अफीम का कारबार और है जिसका उल्लेख किया जा सकता है। वैसाख (मार्च-अप्रैल) से स्रावन-भादों (जून-अगस्त) तक कच्ची अफीम इकट्ठी की जाती है। किसान इसको मिट्टी के घड़ों में भरकर रख देता है। घड़े में अलसी का तेल भी डाल दिया जाता है जिससे न तो वह भाप बनकर उड़ सके और न कड़ा ही हो सके। फिर वह इसे बाजार में या सौदागरों के हाथ बेच देता है। वह सौदागर उसे थैलों में भरकर चार-छः सप्ताह तक इस प्रकार टंगा रहने देता है कि सारा तेल छन जाय।

जून और जुलाई के महीने में वर्षा आरम्भ होते ही इसको एक बड़े ताँबें के बर्तन में रक्खा जाता है और खूब चाक किया (मिलाया) जाता हैं। अच्छी तरह मिल जाने पर, परातों में

लेकर इसे खूब मथते (गूँथते) हैं। एक-एक परात पर दो आदमी होते हैं। लगभग एक सेर अफीम एक समय में गूँथी जाती है। एक परात में गुँथ जाने पर उसे दूसरे परात वाला ले लेता है और दूसरे से फिर उसे तीसरे में जाना पड़ता है। इन तीनों परातों में मथ जाने के बाद वह बिल्कुल मिल जाती है और गुल्ठे आदि बिल्कुल नही रह जाते। अब इसके गोले बना लिए जाते हैं।

सौदागर इन्हें खरीदने से पहिले देख लेता है कि वह बिल्कुल स्वच्छ है? इसके लिए वह गोले के बीच की थोड़ी सी अफीम निकालकर पानी में घोल लेता है। इसे वह 'फिल्टर पेपर' (छानने का एक सोखता जैसा कागज़) से तीन बार छानता है। जरा सा भी कूड़ा-करकट निकालने पर अफीम अशुद्ध समझी जाती है। ऐसी अफीम को बम्बई के व्यापारी जो इसे बाहर भेजते हैं, नहीं खरीदते। वह गुज़रात और हैदराबाद में बिकने के लिए भेज दी जाती है।

वह थैले, जिनमें कच्ची अफीम रखकर टाँगी जाती है, सुखाकर बेच दिये जाते हैं (इन थैलों के सम्बन्ध की बात ऊपर आ चुकी है) सूखे हुए थैलों को फिर पानी में उबाल लेते हैं। इस प्रकार से निकली हुई अफीम को, कई बार साफ़ पानी से धो लेने के पश्चात् सुखा लेते हैं। इसको 'खा' कहते हैं।

राज्य में सूती कपड़ा बनाने की भी एक 'फैक्टरी' (कारखाना) है। यहाँ खादी, मलमल, चेक, सफेद और (खाकी जीन तथा धोतियाँ और साड़ियाँ बनाई जाती हैं। पहले इस कारखाने की देखभाल भी राज्य की ओर से होती थी। इसे १८७० में महाराज तुकोजी राव द्वितीय ने लगभग दस लाख रुपया लगाकर खोला था। यहाँ लगभग पाँच सौ

मज़दूर काम करते हैं। इनको लड़ाई से पहले दो आने से ६ आने तक प्रतिदिन मज़दूरी मिलती थी। इस 'मिल' से लगा हुआ विनौला निकालने का एक कारखाना भी है। यह कारखाने अवश्य, (जबसे चुंगी कच्ची रुई पर से कर दी गई है, बहुत बढ़ गये हैं। इस समय वहाँ ५ ऐसे कारखाने हैं। ये करई, महेश्वर, विसारपुर, सनावद और खातेगाँव में स्थित हैं।

व्यापार

यहाँ मुख्यतः गल्ले और अफीम का व्यापार होता है। ये वस्तुएँ बम्बई और दूसरे बड़े बड़े शहरों और बन्दरगाहों को भेजी जाती है। इस व्यापार में दिन प्रतिदिन उन्नति हो रही है। रेलों और सड़कों के बढ़ने से आयात और निर्यात की काफी उन्नति हुई है।।

यहाँ अन्य स्थानों से आने वाली चीजों में नमक चीनी, कपड़ा, मिट्टी का तेल और धातुएं आदि मुख्य हैं। कोई आँकड़ा न होते हुए भी यह आसानी से कहा जा सकता है कि पिछले बीस वर्षों में इन वस्तुओं ने काफी उन्नति की है। मिट्टी के तेल के कारबार में विशेष उन्नति हुई है। इस तेल की खपत दिनों दिन बढ़ती ही जा रही है, यहाँ तक कि अब कोई भी ऐसा गाँव शायद ही हो जहाँ यह न बिकता हो। इसके अतिरिक्त विदेशी कपड़ों में भी खूब उन्नति हुई है। इसका मुख्य कारण यह है कि यहाँ अँग्रेजी कपड़े कोट, पैंट, टोपी आदि—के पहिनने का रिवाज़ वेग से बढ़ रहा है।

यहाँ से बाहर भेजी जाने वाली वस्तुओं में गल्ला मुख्य है। हड्डियाँ भी पर्याप्त मात्रा में बाहर भेजी जाती हैं। भेजे जाने वाले गल्ले में तिल, कपास और अफीम मुख्य हैं। इन

वस्तुओं की दिन प्रतिदिन बढ़ती होती जा रही है। हाँ, केवल अफीम का व्यापार अवश्य गिर रहा हैं।

राज्य के व्यापारिक केन्द्र इन्दौर शहर, सनावद, बरवाहा, मूहो और रामपुर हैं। यहाँ के बड़े-बड़े सौदागर अपने एजन्टों द्वारा छोटे-छोटे व्यापारियों और गाँव के बाजारों से वस्तुएँ खरीदते हैं। इन व्यापारियों में अधिकतर मारवाड़ी बनिये होते हैं। ये बनिये मुख्यतः अनाज, अफीम और कपड़े का व्यापार करते हैं। शिया मुसलमानों में बोरों (एक जाति) का भी व्यापार में अच्छा स्थान है। यह मिट्टी, के मकान बनाने के पत्थर आदि आदि वस्तुओं का कारबार करते हैं। पारसी जाति के लोगों के हाथ में भी थोड़ा सा व्यापार है और ये अधिकतर विदेशी वस्तुएँ ही बेचते हैं।

सारा व्यापार अधिकतर रेलों द्वारा ही होता है। किन्तु 'नोट' यहाँ बहुत कम चलते हैं। इसका कारण केवल यह है कि लोग इसको शीघ्र खो जाने या नष्ट हो जाने से डरते है। अतः लगभग सारा लेन-देन नगद या हुँडियों में होता है।

यातायात के साधन

महात्मा बुद्ध के काल में मुख्य व्यापारिक मार्ग पैमाना से स्रावस्ती तक जाने वाला था। इस मार्ग पर पड़ने वाले शहरों में महेश्वर और उज्जैन मुख्य है। इसके बाद मुग़ल बादशाहों के काल की मुख्य सड़क बीजापुर से, भीकागाँव, पुल्तान, अकबरपुर, देपालपुर और फतेहबाद होती हुई उज्जैन तक जाती थी। दूसरा मार्ग बड़ौदा, जरांर, हलोल, दोहद और इन्दौर से होकर जाता था। किन्तु अब तो अधिकतर आना जाना रेलों द्वारा होता है। यहाँ की मुख्य रेलवे लाइन 'होल्कर स्टेट रेलवे' है। बरवाहा, सनावद, मूहो और इन्दौर होती हुई, राज्य

की सीमा में लगभग ६२ मील तक फैली हुई है। बरवाहा पर नर्वदा को पार करने के लिए बड़ा सुन्दर पुल बना हुआ है। मार्ग में कालाकुण्ड से पातालपानी स्टेशन तक हृदयाकर्षक दृष्य मिलता है। व्यापार में अति सुविधाजनक होने के कारण रेलों का प्रभाव बढ़ रहा है। अकाल आदि के अवसरों पर इनकी उपयोगिता भलीभाँति दिखलाई पड़ती है। १८९९-१९०० के अकाल में इनके द्वारा अन्न पहुँचाने के अतिरिक्त न जाने कितने प्राणों की रक्षा हुई थी।

सड़कों में, बम्बई से आगरा जाने वाली सड़क सबसे पुरानी है। यह भारत सरकार द्वारा १८४०-१८६० में बनवाई गई थी। सेन्दवा, महेश्वर, मृहो और इन्दौर के शहरों में होती हुई, यह राज्य की सीमा में लगभग ८० मील तक फैली हुई है।

दूसरी सड़क इन्दौर—सिमरोल-खंडवा सड़क है जो इन्दौर में जाकर आगरा - बम्बई सड़क से मिलती है। यह महो, बरवाह सानवद और भाकागाँव के परगनों से होकर जाती है और ५० मील तक राज्य में फैली हुई है।

उज्जैन—आगरा सड़क भी उल्लेखनीय है। यह महीदपुर और रायपुर परगनों से होकर जाती है और लगभग १२ मील तक फैली हुई है। ये सब सड़के भारत सरकार द्वारा बनवाई गई थीं और अब भी उसी की देख-रेख में हैं।

दरबार द्वारा बनवाई गई सड़कों में इन्दौर से देपालपुर तक जाने वाली सड़कें मुख्य है। यह २४ मील लम्बी है और इसके मार्ग में पड़ने वाले स्थानों में हतोद स्थान मुख्य है। इस सड़क को चम्बल स्टेशन तक बढ़ाने का भी विचार किया जा रहा है। दूसरी मुख्य सड़क इन्दौर से बेतमा तक जाती है।

खरगोन—सनावद सड़क ४१ मील लम्बी है, किन्तु इसका क्षेत्र ११ मील मध्य प्रान्त में पड़ता है। यह राज्य दो प्रसिद्ध नगर खरगोन और सनावद को मिलाती है। सनावद नगर राजपूताना—मालवा रेलवे पर स्थित है। इस सड़क को १३ मील और बढ़ाया जा रहा है और अन्त में इसे आगरा से बम्बई तक जाने वाली सड़क से मिला दिया गया है। बरखहा—महेश्वर सड़क ३१ मील लम्बी है। मंडलेश्वर—खरगोन सड़क कसरावद से होकर खरगोन तक जाती है। यह लगभग २६ मील लम्बी होगी। इनके अतिरिक्त और भी बहुत सी छोटी-छोटी सड़कें हैं, जो मुख्य-मुख्य शहरों और सड़कों को मिलाती हैं।

इस राज्य में मोटरें और अन्य आधुनिक गाड़ियाँ इनीगिनी हैं। मोटरें तो केवल महाराज और कुछ बड़े बड़े अफसरों के पास हैं। देहात में तो सारा काम बैल गाड़ियों द्वारा लिया जाता है। इन्हीं द्वारा गावों से गल्ला, कपास और अफीम आदि शहर पहुँचाई जाती हैं। नगरों में भी बैलों द्वारा खींची जाने वाली एक गाड़ी (शिकरम) सवारी आदि के काम में लाई जाती है।

राज्य में पोस्ट, तार और टेलीफोन की भी सुविधा है। यहाँ लगभग ३० पोस्ट आफिस हैं जो ५०० मील के क्षेत्रफल में फैले हुए हैं। इन पोस्टआफिसों के साथ साथ बहुत से स्थानों पर तारघर भी खोले गये हैं। इन्दौर शहर में टेलीफोन भी है जो खास खास स्थानों को मिलाता है।

अकाल

१८९९-१९०० के अकाल के बाद यहां अभी तक कोई अकाल नहीं पड़ा था। यह अकाल विशेषतः मालवा के जिलों में फैला

था जिसमें लगभग ५००० मृत्यु हुई थीं। केवल ३७% लगान वसूल हो पाया था और चीजों का दाम १००–३०० % बढ़ गया था। इस अवसर पर लोगों की रक्षा के लिये राज्य ने पन्द्रह लाख रुपया व्यय किया था। इसके अतिरिक्त ३ लाख रुपया सहायता-कोष से खर्च हुआ था और अन्य सहायता-समितियों आदि ने भी काफी रुपया खर्च किया था. फिर भी न मालूम कितने घर नष्ट हो गये थे और हजारों मरे थे। केवल ८,२९८ मनुष्य तो दूसरे स्थानों को भाग गये थे। ५,६५८ व्यक्ति बीमारियों के कारण मरे थे और दूसरे राज्यों के मरने वालों की संख्या लगभग ३,०३० थी।

शासन

पहले यहां कोई नियमित-शासन-व्यवस्था न थी। उस समय के सरदारों, मल्हार राव प्रथम और यसवन्त राव आदि को सेना सम्बंधी कार्यों से अवकाश मिलता ही न था कि नागरिक व्यवस्था की ओर ध्यान देते। किन्तु अब यहां भी अंग्रेजी शासन-प्रणाली के अनुसार राज्य होता है। स्टेट काउंसिल का प्रत्येक सदस्य अलग अलग विभाग का अधिकारी होता है और उस विभाग का पूरा दायित्व उस पर होता है।

राज्य का अंग्रेजी सरकार से सम्बंध मन्दसौर की सन्धि के अनुसार है। यह सन्धि ईस्ट इंडिया कम्पनी और महाराज मल्हार राव होल्कर के बीच हुई थी। इस सन्धि में कुल १७ शर्तें के अनुसार भारत सरकार का एक मंत्री राज्य में रहता है।

राज्य का काम चलाने के लिये एक काउंसिल है। उसका प्रत्येक सदस्य एक विभाग का अधिकारी है। ये विभाग निम्नलिखित हैं :—

(१) न्याय विभाग—यह विभाग न्याय, पुलिस और जेलों के शासन का प्रबन्ध करता है।

(२) फौजी –'इम्पीरियल सर्विस ट्रप्स' और राज्य की फौज, दोनों इस विभाग के अंन्तगर्त है।

(३) अर्थ-विभाग—इसमें चुंगी, खजाना और अन्य हिसाब-किताब का काम होता है।

(३) कर विभाग—कर के मामले, जंगल और 'पब्लिक वर्क्स' आदि इसके आधीन है।

(४) गृह विभाग –डाकघर, चिकित्सा और शिक्षा की देख रेख इस विभाग के हांथ में है।

(५) साधारण-विभाग—धर्मादाय और सहायता पर चलने वाली संस्थओं की देख भाल।

(६) वैदेशिक विभाग—यह विभाग वैदेशिक प्रश्नों से सम्बंध रखता है। आदि आदि।

राज्य के कामों के लिये हिन्दी (देवनागरी) भाषा प्रयोग होता है। पुलिस कर और अदालत आदि सम्बंधी सभी काम हिन्दी में होता है। लिखने के लिये बालबोध लिपि का प्रयोग होता है। केवल कुछ ही पदधिकारी अंग्रेज़ी या मराठी में अपनी रिपोर्ट आदि दे सकते हैं। हिसाब-किताब मराठी में रक्खे जाते हैं।

सुविधा के हेतु राज्य को, ज़िलों, परगनों, गांव और मौज़ों आदि, शासन-विभागों में बांट लिया गया है। यहां कुल ५ ज़िले और ३७ परगने हैं। सब से बड़े ज़िले का क्षेत्रफल ७००० वर्ग मील और सब से छोटे का १००० वर्ग मील है।

प्रत्येक ज़िला एक सूबा के आधीन होता है। यहां ज़िला और सेशन न्यायाधीश, मैजिस्ट्रेट होता है और ज़िला पुलिस दरोगा आदि होते हैं। पब्लिक वर्क्स और जंगल विभाग भी होते हैं।

ये सब विभाग सूबा के आधीन होते हैं। यही जिले का सब से बड़ा अफसर और मजिस्ट्रेट होता है और जिले के शासन का सारा भार इसी के ऊपर होता है। जिलों में, इन्दौर, महीदपुर, निमार, नेमावर और रामपुर-भानपुर मुख्य हैं।

हर एक जिला कई परगनों में विभाजित होता है। प्रत्येक परगना एक अमीन के आधीन होता। यह एक सूबा के आधीन होते हैं। लेकिन आलमपुर का परगना किसी भी जिलेके आधीन नहीं है। परगनों में आधीन के अतिरिक्त, एक मैजिस्ट्रेट, एक, मुंसिफ एक छोटा दरोगा, एक पोस्टमास्टर और एक शिक्षक होता है। बड़े बड़े परगने कई थानों में बांट दिये गये हैं।

गांव अब भी बहुत कुछ अंशों में स्वावलम्बी हैं। वहां का मुखिया छोटे मोटे सारे झगड़ों का निपटारा करता है। पटवारियों के अतिरिक्त वहां राज्य की ओर से अन्य नौकर, जैसे पटेल आदि भी होते हैं। पटेलों को राज्य की ओर से वसूल हुए लगान के अनुसार रुपया मिलता है। इसका काम खेती को बढ़ाना और उसकी मालियत निश्चित करना होता है। खेती सम्बंधी और अन्य गांव के झगड़ों में भी इसके द्वारा जांच पड़ताल होती है। गांव के खर्च के बटवारे का भी दायित्व पटेल पर होता है। यह पद पुश्तैनी होता है, इस लिए लोग इसकी मान करते हैं।

गाँव में एक चौकीदार भी होता है। पहले इसको किसानों द्वारा अन्न आदि बंधा होता था, किन्तु अब उसे राज्य की ओर से ४ या ५ रुपये मासिक वेतन मिलता है। इसके अतिरिक्त एक वेगारी भी होती है। इसका काम सन्देश-वाहक का होता है। इसे प्रति सौ एकड़ भूमि पर आधी एकड़ भूमि मिलती है। इसके अतिरिक्त काफी भूमि इनाम के तौर पर भी मिलती है

कुछ अन्न भी इन सब के अतिरिक्त इसे मिलता है और एक स्थान भी पुश्तैनी होता है।

लोहार, बढ़ई और चमार आदि भी प्रत्येक गाँव में होते हैं। इनको हल पीछे २० या ५० सेर अनाज प्रतिवर्ष मिलता है। खालसा भी गावों में होते हैं जो वहां की पैदावार की देख रेख करते हैं।

क़ानून और न्याय

पुराने समय में भारत की केन्द्रीय सरकार स्वयं छिन्न-भिन्न थी। उसे किसी भी प्रकार से शान्ति स्थापित रखना ही न्याय था। इसके लिए कठोर से कठोर उपायों का प्रयोग किया जाता था। मल्हाराव होल्कर प्रथम, महारानी अहिल्याबाई और तुकोजीराव होल्कर (प्रथम) के समय में कोई लिखे हुए क़ानून न थे। पूर्व कालीन पेशवाओं के समय से जो 'न्याय' चला आ रहा था, उसकी अनुरूपता के पालन का विशेष ध्यान रहता था। मामलों में जाँच पड़ताल भी हुआ करती थी। उनको पंचायत में सुपुर्द भी कर दिया जाता था। फैसला उचित न मालूम होने पर कोई भी दल मुक़दमें को अधिक उच्च-अधिकारियों के सामने रख सकता था। अन्त में मामला 'महाराज' तक ले जा सकते थे। किन्तु जब तक किसी का कोई सम्बंधी या मित्र न्यायालय में किसी पद पर न हो या वह स्वयं काफी अमीर न हो उसके मामले का 'महाराज' तक पहुँचना बहुत कम सम्भव होता था। धर्म सम्बंधी मामलों में पुरोहित या पंडित की भी राय ली जाती थी। न्याय करते समय 'शुद्ध न्याय' की अपेक्षा शांन्ति स्थापित रखने की ओर अधिक ध्यान दिया जाता था। शास्त्रों और कुरान में बने नियमों से भी सहायता ली जाती थी। प्रत्येक परगने में 'कमासदार' सभी प्रकार के मामलों का

न्यायाधीश होता था। कत्ल और डकैती आदि का पता लगाने और उचित दंड देने की विशेष कोशिश की जाती थी। तुकोजी राव प्रथम की मृत्यु (१७९७) के बाद लगभग ४० वर्ष तक राज्य में गड़बड़ी चलती रही।

जब महाराज तुकोजीराव द्वितीय गद्दी पर बैठे, उस समय उचित ढंग के न्यायालय आदि न थे। कमासदार अपने अपने परगनों में दीवानी और फौजदारी आदि सभी मुकदमों का फैसला करते थे। दीवानी के मामलों में कभी कभी राज्य भी हस्तक्षेप करता था। महाजन अपना रुपया वसूल करने के लिए कर्जदार के दरवाजे पर धरना धर कर बैठ जाता था। ऐसे मामले पंचायत को सुपुर्द भी कर दिए जाते थे।

राज्य के कर्मचारी प्रत्येक मामले में हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं समझते थे। वे केवल अपने मित्रों और सम्बंधियों के मामलों में दूसरे दल वालों पर दबाव डालते थे। बड़े बड़े दीवानी के मामले महाराज के सामने भी लाए जाते थे। ऐसा करने के लिए दोनों दल वालों को काफी रुपया (२००० से ५००० रु० तक भी) जमा करना पड़ता था। जो दल हारता था उसका रुपया ज़ब्त कर लिया जाता था और चूंकि कोई न कोई हारता अवश्य था, इस प्रकार से राज्य को काफी आमदनी हो जाती थी।

शहर में छोटे छोटे फ़ौजदारी के मामले शहर कोतवाल स्वयं तय करता था। इसका न्याय कोतवाली में ही होता था। अधिक संगीन मामलों को वह दरबार में भेज देता था। कोतवाल को छोटे छोटे दीवानी के मामलों को भी तय करने का अधिकार होता था। वह पंचायत भी बिठा सकता था। प्रत्येक जाति की अलग अलग पंचायतें भी थीं। इन पंचायतों के फैसले

दोनों दल वाले मानने को वाध्य होते थे। बड़े बड़े मामलों की अपील दरबार में भी की जाती थी, लेकिन ऐसा करने के लिये दरबार में काफी प्रभाव होना आश्यक था।

शहर कई भागों में विभाजित था और प्रत्येक भाग में एक कोतवाली थी। जेल का कर्मचारी एक दरोगा होता था। कैदियों को ठीक भोजन देने का प्रबन्ध था और उनसे सड़क बनाने या राज्य के बागों में काम लिया जाता था। जेल में एक हकीम भी होता था।

उस समय चोरी का समान बहुत बिकता था। बड़े-बड़े सौदागर भी यह करते थे और पकड़े जाने पर उनको पुलिस घसीटकर न्यायालय में ले आती थी। इसको दूर करने के लिये शराफे में एक मुन्शी और चार चपरासी नियुक्त किये गये थे। इनका खर्च इन्हीं सौदागरों को देना पड़ता था। मुन्शी से सर्टीफिकेट ले लेने पर किसी बात का डर नहीं रहता था।

इस समय तक काफी काम लिखा—पढ़ी में होने लगा था। फैसले भी लिखे हुये दिये जाते थे। प्रत्येक फौजदारी के मामले को पहले 'फौजदारी—विभाग' में भेज दिया जाता था। वहाँ से राय के सहित वह फैसले के लिये दरबार में भेज दिया जाता था।

दीवानी में, १०००) तक का फैसला 'नजीम-अदालत करती थी। इसके फैसलों की अपील 'मीर-मुन्शी' के यहाँ की जा सकती थी। अन्त में मामले महाराज के सामने सुनवाई के लिये रक्खे जा सकते थे। किन्तु महाराज तक पहुँचने के पहिले उन्हें 'चितनीसी-विभाग' में जाना पड़ता था। यहाँ का कर्मचारी कहने सुनने या किसी भी दबाव में आकर जो कुछ

भी लिख देता था, दरबार से भी वही फैसला हो जाता था। इस कारण चारों ओर असन्तोष फैलने लगा और लोग अपने मामलों को लेकर स्वयं महाराज के सामने उपस्थित होने लगे।

इसका फल यह हुआ कि 'हिज़ हाइनेस' तुकोजीराव द्वितीय ने एक दिन 'आम-दरबार' करना शुरू किया। इस दिन वे स्वयं लोगों की प्रार्थनायें सुनते थे। किन्तु बाद में इतने अधिक प्रार्थना-पत्र आने लगे कि उन्हें एक प्रकार की कमेटी इसके लिये बनानी पड़ी।

१८७२ में राजा सर महादेव राव की नियुक्ति के बाद, यहाँ ब्रिटिश भारत की तरह के न्यायालय आदि बने और उनका पुनः संगठन हुआ। अब न्यायालय में एक सदर और दो-तीन न्यायधीश रक्खे गये इस न्यायालय के अधिकार 'हाई-कोर्ट' के बराबर थे। इसके अतिरिक्त और भी बहुत से सुधार हुये। १८७८ में कानून की पढ़ाई के लिये एक दर्जा (वर्ग) भी खोला गया। इस समय भी राज्य में प्रत्येक वर्ष कानून की परीक्षा होती है और सनद प्रमाण पत्र मिल जाने पर उस व्यक्ति को राज्य की सभी अदालतों में वकालत करने का अधिकार होता है।

इस समय सारा कानून विभाग काउन्सिल के एक सदस्य (न्याय-सदस्य) के आधीन है। सभी नये कानूनों को लागू करने का दायित्व भी उसी पर होता है। यहाँ के सभी कानून भारत सरकार के कानूनों के अनुसार है और उन्हीं के लिये बनाये गये हैं। मृत्यु, कैद या कालेपानी आदि दंडों के लिये महाराज का हस्ताक्षर आवश्यक होता है।

सदर अदालत सबसे बड़ी होती है। आजकल दीवानी

के मामलों के लिये शहर में तीन अदालते हैं। प्रत्येक जिले में भी एक एक जिला-अदालत है। उत्तरी और दक्षिणी परगनों में एक मुन्सिफ़ की अदालत होती है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक परगने में एक अमीन की अदालत भी होती है।

फौजदारी की अदालतों में भी सदर-अदालत सबसे बड़ी होती है। इसके आधीन सेशन, जिला और मैजिस्ट्रेटों की अदालते हैं।

इन्दौर शहर में एक सेशन जज और दो मैजिस्ट्रेट हैं जो फ़ौजदारी के मामलों का फैसला करते हैं। ज़िलों में अमीन, मैजिस्ट्रेटों और सेशन जजों की अदालते हैं।

राज्य में इस समय रजिस्ट्री करने के ४२ दफ्तर हैं। ज़िलों में सूबा ही रजिस्ट्रार होते हैं। यहाँ का 'रजिस्ट्रेशन ऐक्ट' १८७८ में 'पास हुआ था।

आय—व्यय

तुको जी की मृत्यु (१८२०) तक, लगान और कर वसूल करने के लिये राज्य में कोई स्थाई व्यवस्था नहीं थी। अहिल्या बाई के समय में इसमें कुछ सुधार हुआ और लगान जिला-कर्मचारियों द्वारा वसूल किया जाने लगा। मंदसौर की सन्धि के बाद, तांतिया जोग की देख-रेख और प्रबन्ध में लगान और करों की वसूली बहुत बढ़ गई। १८१७ में वसूली कठिनाई से ५ लाख हो पाती थी। अब वह बढ़कर १८२६ में २७ लाख हो गई। इसके बाद, तुको जी राव की नाबालिगी के समय शासन-व्यवस्था सर राबर्ट हेमिल्टन के हाथ आई। इस समय से राज्य की आर्थिक दशा संतोषजनक रही।

१९०७ से यहाँ भी ब्रिटिश सरकार का रुपया चलने लगा इसके पूर्व हाली रुपये चलते थे। ये पारसी ढंग के होते

हैं और इनके बीच में उसका मूल्य लिखा होता था। महाराज शिवा जी राव के समय के ताँबे के सिक्के अब भी चलते हैं। उनके एक तरफ 'श्री मन्त महाराज शिवा जी राव होल्कर बहादुर' लिखा होता है और उन्हीं की तस्वीर बनी रहती है। दूसरी ओर 'इन्दौर पाव आना (या अर्ध आना)' सम्बत् १९५७ लिखा रहता था।

भूमि-कर

भूमि राज्य की सम्पति समझी जाती है। जब तक किसान 'कर' देता जाता है। वह उस पर जोत-बो सकता है। 'कर' न देने पर राज्य भूमि को उससे छीन कर दूसरे को दे सकता है।

पूर्व काल में कोइ ठीक व्यवस्था न थी। इजारे दारों को पूरा पूरा परगना या ज़िला दे डाला जाता था। पहली व्यवस्था १८६५ में हुई थी। इस समय १५ वर्षों के लिये भूमि किसानों को सालाना कर पर दी गई थी।

१९८१ में यह व्यवस्था दोहराई गई थी। इस समय नक़शे भी कुछ हद तक ठीक किये गये थे।

११०३ में कुछ अंग्रेज अफसरों की सहायता से नई व्यवस्था बनाई गई थी। यही व्यवस्था अब तक चली आ रही है।

इस व्यवस्था के अनुसार भूमि कई भागों बांटा गया है। इस अवसर पर मिट्टी की गहराई, उपज, सिंचाई की सुविधा और सड़क से निकटता आदि का ध्यान रक्खा गया था। इज़ारे-दारी प्रथा को समाप्त करने का भी विचार किया गया था। किसानों को १५ से ३० वर्षों तक के लिये भूमि दी गई है।

अभी तक इजारेदारों या बड़े बड़े किसानों द्वारा लगान वसूल किया जाता था। उनको १० प्रतिशत कमीशन दे दिया

जाता था। वे इस रुपयों को निश्चित तिथि पर अमीन के यहां जमा कर देते थे। तिथियां, १५–कार्तिक, १–चैत और १–जेष्ठ हैं।

जब तक यह व्यवस्था आरम्भ नहीं हुई थी, वसूली आदि मामलों में बड़ी गड़बड़ी थी। किसानों के ऊपर कई लाख का राज्य-कर्ज लद गया। लगभग ७९.२ लाख रुपया लगान किसानों पर बाकी था। इस रुपये के वसूली की कोई सम्भावना न थी। महाजन भी किसानों को रुपया उधार नहीं देते थे क्योंकि उनको भी उसके वसूली की कोई आशा न थी। राज्य का कानून है कि किसान की सम्पत्ति पर पहला अधिकार राज्य-कर के वसूली की कोई सम्भावना न थी। फिर ऐसी दशा में महाजन अपने रुपये कहां से वसूल कर सकेंगे। इन सब बातों का परिणाम केवल यह हुआ कि हालत दिन प्रति दिन खराब होती गई।

इस व्यवस्था के अनुसार इजारेदारी प्रथा समाप्त कर दी गई है। अब केवल थोड़े से इजारेदार शेष हैं। दरबार इनसे इजारों को छीनना न्यायोचित नहीं समझती। ये अब भी १० प्रतिशत पाते हैं। अन्य स्थानों में किसान सीधा दरबार को रुपया देता है।

टीपदारी की प्रथा भी अब समाप्त कर दी गई है। इस प्रथा के अनुसार टीपदार स्वयं किसानों का कर निश्चित तिथियों पर जमा कर देते थे। और फसल तैयार होने पर किसान से ब्याज सहित वसूल करते थे। उनके ब्याज की दर अक्सर बहुत ऊँची भी हुआ करती थी। इस प्रकार से किसानों को बहुत हानि होती थी। ऐसा करने की आवश्यकता इस लिये होती थी कि 'कर' जमा करने की तिथि फसल कटने के बहुत पहले पड़ती

थी इस व्यवस्था के अनुसार तिथियों को बदल दिया गया और अब टीपदारों की कोई आवश्यकता नहीं रह गई है। इस समय की तिथियां १ से १५ जनवरी और २ से १५ मई हैं।

रुपया न जमा होने पर एक नोटिस भेजने का नियम है। इसका यदि कोई असर न हुआ और रुपया जमा न हो सका तो 'चल' मूविएबुल सम्पत्ति कब्जे में ले ली जाती है और यदि आवश्यकता हुई तो नीलाम भी कर दी जाती है। बैल और कृषि सम्बन्धी वस्तुएँ तथा औज़ार नीलाम नहीं किये जाते और न कब्जे में ही लिये जाते हैं। यदि इतने से पूरा रुपया वसूल न हो सका तो 'अचल' सम्पत्ति भी नीलाम कर दी जाती है। इस सम्बंध में गिरफ्तारी आदि केवल कुछ ऐसे ही मामलों में होती है जो अधिक महत्व पूर्ण होते हैं। यह सब धन रुपयों में ही स्वीकार किया जाता है, किस्म' (अन्न आदि के रूप) में नहीं दिया जा सकता।

अन्य-कर

यह 'कर' चुंगी, आबकारी और टिकटों द्वारा प्राप्त होता है। सारे 'कर' सीधे दरबार द्वारा वसूल होते हैं। १९०४ से पूर्व इनमें बहुत सी गड़बड़ियां थीं। बहुत से अनावश्यक 'कर' भी लिये जाते थे जिनको अब बन्द कर दिया है। चीज़ों का दाम अधिक बढ़ जाने पर, एक प्रकार का कर जिसे "लाथा" कहते हैं, लिया जाता था। अब इस कर का लेना बन्द कर दिया गया है। अन्न, नमक, तेल, पान और बहुत सी दूसरी नित्य काम आने वाली वस्तुओं के भी बाहर भेजने और मगाने पर एक प्रकार की चुंगी देनी पड़ती थी। अब यह भी समाप्त कर दी गई है। एक ज़िले से दूसरे ज़िले में सामान जाने पर भी

चुंगी लगती थी जो बन्द कर दी गई है। अब केवल राज्य के १३ मुख्य स्थानों पर चुंगी लगती है। कपास पर भी लगाये गये करों में काफी कमी कर दी गई है।

चुंगी से आमदनी, १९०१ में ६.४ लाख, १९०३ में ६.७ लाख, १९०५ में ६.५ लाख और १९०६ में ७.८ लाख थी।

अफीम पर भारी 'कर' लगाया गया है। इधर कुछ वर्षों से इसका भेजा जाना बहुत कम हो गया है। फिर भी इससे राज्य को बहुत आमदनी है।

१८४३ से १८८० तक अफीम के व्यापार ने खूब उन्नत्ति की। इसका कारण सिंचाई का अच्छा प्रन्बध आदि था। महा-राज तुकोजी राव ने बहुत से कुएँ और तालाब बनवा दिये हैं। ब्रिटिश भारत में अफीम की खेती के कम होने का भी यहां की खेती पर अच्छा प्रभाव पड़ा। लेकिन १८८० के बाद से यह व्यापार गिरने लगा। इसका कारण यह था कि यहां आवश्यकता से अधिक अफीम बोई जाने लगी थी। लोगों के पास काफी अफीम इकट्ठी भी हो गई थी।

अफीम पर कई प्रकार के कर लगते हैं। बनी हुई अफीम और रवा पर कर लगाने के अतिरिक्त कच्ची अफीम पर भी कर लगाए गये हैं।

इसका व्यापार इन्दौर शहर में सट्टे द्वारा होता है।

नशे की दूसरी वस्तुएँ यहां कम बनती हैं। देहातों में थोड़ी सी ताड़ी बनती है। शहरों में विदेशी शराब भी बिकती है। इन पर ३ रुपया प्रति बोतल चुंगी लगती है। इसका भी ठीका नीलाम कर दिया जाता है।

गांजा और भांग, संदबाद और चिखाल्दा परगनों में पैदा किया जाता है, लेकिन बहुत थोड़ी मात्रा में। सनावद और चिखाल्दा का गांजा खंडवा के गांजे की किस्म का होता है।

गांजा को बाहर भेजने के लिये एक रुपये मन और भांग के लिये आठ आना मन चुंगी लगती है।

१८८० में ब्रिटिश सरकार से की गई दरबार की शर्तों के अनुसार राज्य से नमक पर लगाये गये हर प्रकार के 'कर' उठा लिये गये। जिस नमक पर ब्रिटिश भारत में चुंगी दे दी जाती है, राज्य उस पर कोई चुंगी नहीं लगाता। इसके बदले में अंग्रेजी सरकार दरबार को ६१,८७५ रुपया प्रति वर्ष देता है।

१८६६ में राज्य के टिकट-सम्बन्धी कानून बनने से पहले, मुकदमों और दस्तावेजों पर दी गई फीस को 'रसूम' कहते थे। कागज पर पहले राज्य की एक मोहर छाप दी जाती थी। फिर उस पर तिथि और मूल्य लिख दिया जाता था। १९०१ के बाद से छपे हुये टिकट और कागज काम में आते हैं। इन पर इनका मूल्य भी छपा होता है। हुँडी के लिये विशेष प्रकार के टिकट हैं जो कि १९०१ में निकाले गये थे।

दिसम्बर १९०३ से पूर्व ये टिकट प्रत्येक परगने में ठीकेदारों द्वारा बेचा जाता था। अब प्रत्येक जिले में इनको बेचने के लिये लाइसेंसदार बिक्रेता होते हैं। राज्य इन्हें ५०) से अधिक के टिकट खरीदने पर ३) प्रतिशत कमीशन देता है। 'स्टैम्प पेपर' के लिये २) प्रतिशत कमीशन मिलता है। यदि उस स्थान पर कोई 'खजाना' न हुआ तो उन्हें ३) प्रतिशत कमीशन दिया जाता है। ५०) से कम के मूल्य का 'स्टैम्प-पेपर' खरीदने पर भी टिकट की भांति—कमीशन नहीं मिलता। इससे राज्य को लगभग डेढ़ लाख रुपये प्रति वर्ष की आमदनी हो जाती है।

स्थानीय स्वायत्त शासन

राज्य में कुछ म्युनिसिपैल्टियां हैं। इन म्युनिसिपैल्टियों को स्थानीय

समितियाँ (कमेटियाँ) कहा जा सकता है। इसके सदस्य कुछ तो सरकारी होते हैं और कुछ गैर सरकारी। इन सदस्यों का चुनाव नहीं होता, बल्कि यह दरबार द्वारा ही चुन लिये जाते सभापति सारी आज्ञांयों को निकलता और जारी करता है। लेकिन यह सभापति सरकारी व्यक्ति होता है और उसको सारे आदेश दरबार द्वारा मिला करते हैं। इन कमेटियों का काम केवल सफाई और रोशनी का इन्तजाम करना होता है। ऐसी पहली कमेटी १८१५ में दीवान बहादुर रघुनाथ राव ने बनाई थी। ये उस समय राज्य के प्रधान मंत्री थे। इस कमेटी का उद्देश्य सफाई की स्थिति में सुधार करना था।

'पब्लिक वर्कस

इस प्रकार का एक विभाग (पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंट) पहिले पहल महाराज तुकोजीराव के समय में खोला गया था। उस समय उस विभाग के लिए एक यूरोपियन इन्जीनियर रक्खा गया था। उसके नौकरी छोड़ देने के बाद स्थानीय इंजीनियरों द्वारा कार्य होता रहा। १९०३ में फिर एक यूरोपीय इंजीनियर की देख-रेख में इस विभाग का पुनः संगठन हुआ। इसी विभाग द्वारा सड़कें, भवन, आदि बनवाने का भी कार्य होता है।

इस विभाग द्वारा किए गए कामों में 'महाराज एडवर्ड-हाल' स्टेट, अस्पताल' और कुछ स्कूल आदि मुख्य हैं। बहुत सी सड़कें भी इस विभाग द्वारा बनी हैं। सिंचाई-सम्बंधी कार्य भी इस विभाग द्वारा काफी हुआ है। इन्दौर शहर के लिए नालियां और बिजली घर भी बना है। राज्य द्वारा एक कार्य-गृह या कारखाना भी खोला गया है। यहाँ बढ़ईगीरी और ढालने आदि का सभी प्रकार का काम होता है।

सेना

प्रारम्भिक काल में सेना की कितनी शक्ति थी, इसके बारे में ठीक ठीक कुछ कहा नहीं जा सकता। केवल १७६९ यहां की सेना की शक्ति का पहले-पहल पता लगा जब तुकोजीराव होल्कर १५००० घोड़ सवारों के साथ विसा जी किशन की सहायता के लिए गए थे।

अब, मंदसौर की सन्धि के अनुसार राज्य में ३,४६५ घोड़े, २०० स्थाई और १००० अस्थाई तथा सहायक सेना है। उस संधि के पश्चात् राज्य की शक्ति में बहुत प्रकार के अंतर आ गए हैं।

हरीराव के समय में सेना की संख्या घट कर ५२ 'पैगा' हो गई थी। लेकिन कुछ दिनों बाद इसको भी घटा कर २६ पैगा कर दिया गया। शेष सेना साधारण 'रिसालों' में परणित कर दी गई जो कि ज़िलों के सभी प्रकार के कार्य करते थे।

महाराज तुकोजीराव द्वितीय के समय, वे ६ पैगा जो सर-नोबत के आधीन थे, बढ़ा कर ९ कर दिये गये। इनमें से एक का नाम यशवंत तबेला था। इसके लिये विशेष प्रकार के कपड़े और चांदी के बटन और फीते बनवाए गये थे।

१९०४ के बाद सेना और कम कर दी गई। इसका कारण यह था कि इतनी सेना के लिये दरबार को खर्च का काफी बोझ संभालना पड़ता था। सेना संतोषजनक न थी और रक्षा-भार के लिये बिल्कुल असमर्थ थी। उसको कम कर देने से राज्य को दो लाख प्रति वर्ष की बचत होने लगी।

सेना की वर्दी खाकी रंग की है। सिपाही तलवार और ढाल बांधते हैं। वे लाल रंग का कमरबंद भी पहिनते हैं। उनके सवारी के साज विदेशी ढंग के होते हैं।

१८९२ से दरबार को साम्राज्य की एक 'क्वेलरी रेजीमेंट' रखना पड़ता है। इसमें ६०० सिपाही थे। १९०६ में इनका फिर से संगठन हुआ। अब वहाँ २०० गाड़ियां, ५०० टट्टू और २०० केवेलरी रक्षक हैं।

सेना का सब से बड़ा अफसर 'जनरल' होता है। सेना सम्बंधी एक दफ़्तर भी है। इसके लिए २२,००० रुपये प्रतिवर्ष व्यय करने पड़ते हैं। पूरी सेना का खर्च, विशेष खर्चों को छोड़ कर लगभग ७ लाख प्रति वर्ष है।

पुलिस और जेल

महाराज तुकोजी राव द्वितीय और शिवा जी राव के समय से ही स्थाई पुलिस रखी जाती है। लेकिन उस समय की पुलिस में अनुशासन की बहुत कमी थी। अतः वह बहुत कम उपयोगी थी।

वर्तमान महाराज की नाबालगी के समय में एक ब्रिटिश पुलिस अफसर के आधीन उसका फिर से संगठन हुआ है। इस अफसर की सेवाएं ब्रिटिश सरकार से उधार ली गई थीं।

इस समय राज्य में कुल २,१३४ पुलिस हैं जिसमें १०१ घोड़सवार हैं। सब से बड़ा अफसर इन्स्पेक्टर जनरल होता है। इसके अतिरिक्त बहुत से छोटे छोटे अफसर भी हैं। २२४ दीवान और १,७०३ साधारण पुलिस तथा ४४ आदमी दफ़्तर में काम करने वाले भी इसी विभाग में हैं। इस प्रकार से ४½ वर्ग मील के अंदर या ३९८ मनुष्यों के बीच एक पुलिस का औसत पड़ता है। इनमें, हिन्दू, सिक्ख और मुसलमान आदि सभी जाति तथा धर्म के लोग हैं।

१९०४ में इस विभाग में एक शाखा अंगूठे का निशान रखने के लिये खोली गई है। इस अंगूठे के निशान के

साथ उस व्यक्ति का एक फोटो और उसका इतिहास भी रक्खा जाता है।

सर टी० माधवराव के मंत्री होने के पूर्व राज्य में कोई स्थाई जेल न था। केवल इन्दौर शहर में लम्बी सज़ा वालों के लिये एक जेलखाना था और परगनों में हवालात बने हुये थे। इनकी दशा इतनी बुरी थी कि लिखी नहीं जा सकती। इनका प्रबन्ध भी बिल्कुल गड़बड़ था। हवालातियों और कैदियों में कोई अन्तर नहीं रक्खा जाता था और उस समय का जेल 'जीवित-नर्क' से किसी भी प्रकार कुछ कम न था।

अब इन्दौर में एक सेंट्रल जेल खुल गया है। जेल सम्बन्धी कानून आदि भी बन गये हैं और इनके प्रबन्ध में भी सुधार तथा परिवर्तन किये गये हैं। वहां के इस समय जेल संयुक्तप्रान्त के जेलों की भांति के हैं। ज़िला जेलों की संख्या चार है। यह राज्य के चार मुख्य-मुख्य ज़िलों में स्थित हैं।

प्रत्येक कैदी को एक आने से दो आने तक का खाना दिया जाता है। इनको सप्ताह में दो बार तरकारी भी मिल जाती है। इन्दौर जेल के कैदियों को कभी-कभी तेल भी मिल जाता है।

कैदियों को भोजन देने से पहले जेल डाक्टर को दिखा देने का नियम है। पहले कैदी स्वयं अपना भोजन बनाते थे किन्तु अब सब का भोजन एक ही रसोंई में बनता है।

इन्दौर जेल एक सुपिरिंन्टेन्डेन्ट के अधीन है। अन्य जेल सेशन और ज़िला जजों के आधीन होते हैं। काउंसिल का एक सदस्य इन्सपेक्टर-जनरल होता है। इन्दौर जेल में

दो स्त्रियां भी 'वार्डर' नियुक्त की गई हैं। सेंट्रल और ज़िला, सभी जेलों की देख-भाल और रक्षा के लिये बहुत से वार्डर होते हैं।

जिला-जेलों में कैदियों से कपड़ा बनवाया जाता है। यह कपड़ा मोटा और देहात के कपड़े की तरह का होता है। लेकिन इन्दौर-जेल में खादी के अतिरिक्त दरी, चटाइयां और कम्बल आदि बनाने का भी काम होता है। रामपुर जेल में खेती का भी काम होता है।

परगनों में हवालात बने हुये हैं। यहां ८ दिन तक की सज़ा वाले कैदी भी रक्खे जाते हैं।

शिक्षा

सन् १८४३ में, महाराज हरीराव होल्कर के समय, में 'इन्दौर स्कूल खोला गया था। यह राज्य की एक धर्मशाला में खुला था। यहां अँग्रेज़ी, हिन्दी और फारसी भाषाओं की शिक्षा दी जाती थी। अँग्रेज़ी विभाग अब बढ़कर अँग्रेज़ी स्कूल बन गया है।

कुछ दिनों बाद संस्कृत, मराठी और सिद्धान्त के विभाग भी खोल दिये गये थे। १८६७ में पहली बार इस स्कूल के विद्यार्थी बम्बई विश्व-विद्यालव की दसवें दर्जे की परीक्षा में बैठे थे। उस वर्ष उनमें से कोई भी उत्तीर्ण न हो सका था। किन्तु दूसरे वर्ष, सन् १८६८ में उनमें से दो विद्यार्थी उस परीक्षा में सफल हुये। इससे अँग्रेजी स्कूल की उन्नति में सहायता मिली और दो ही तीन वर्षों में उसके विद्यार्थियों की संख्या १०५ हो गई।

१८९१ में होल्कर कालेज के खुल जाने से और भी उन्नति हुई। १८९५ में अँग्रेज़ी स्कूल के विद्यार्थियों की संख्या बढ़ कर ३६० हो गई। उस वर्ष उपर्युक्त विश्वविद्यालय

की परीक्षा में भी २१ विद्यार्थी बैठे थे जिनमें से १३ परीक्षोत्तीर्ण हुये।

ऐसा लगता है कि १८६५ से पूर्व राज्य को अपनी प्रजा की शिक्षा की ओर कोई ध्यान नहीं था। कुछ मुख्य-मुख्य स्थानों में, बड़े-बड़े व्यक्तियों द्वारा खोले गये निजी या प्राइवेट स्कूल थे। यहां इन्हीं लोगों की इच्छा के अनुसार पढ़ाई होती थी। १८६९ के लगभग यहां सभी ज़िलों में स्कूल खुल गये थे। जहां हिन्दी और मराठी की शिक्षा दी जाती थी। इसी समय एक लड़कियों का स्कूल भी खोला गया था। इन स्कूलों को चलाने के लिये लगभग ३१००० रुपयों का खर्च पड़ता था।

१८९१ से पूर्व राज्य में उच्च शिक्षा के लिये कोई प्रबन्ध न था। केवल कुछ वज़ीफे छात्रों को राज्य के बाहर स्कूलों में पढ़ने के लिये दे दिये जाते थे। इस वर्ष महाराज शिवा जी राव होल्कर ने एक कालेज खोला था। उसी वर्ष उसके लिये एक भवन की नींव भी डाली गई थी जो १८९४ में बनकर तैयार हो गया था। इसके साथ दो 'बोर्डिंग हाउस' भी लगे हुये हैं जहां छात्रों के रहने का प्रबन्ध है। १९०५ से इसका सम्बन्ध इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्थापित कर दिया गया और वहां की शिक्षा के अनुसार यहां की शिक्षा होने लगी।

यहां डाक्टरी सिखाने का कोई स्कूल नहीं है, इसलिये इसकी शिक्षा के लिये अधिकतर छात्र बम्बई के 'ग्रांट मेडिकल कालेज' में पढ़ने जाते हैं। शहर के अस्पताल में भी कम्पाउण्डरी आदि की शिक्षा का प्रबन्ध है और वहां बहुत से छात्र शिक्षा पाते हैं। इसी प्रकार की सुविधा 'इंजीनियरिंग' सीखने वालों के लिये भी है।

अधिकतर व्यापारी होने के कारण मुसलमान अपने लड़कों को उच्च शिक्षा नहीं देते। थोड़ा सा पढ़ लेने पर उन्हें उसी व्यापार में लगा दिया जाता है।

होल्कर कालेज को छोड़कर अब राज्य में ९२ स्कूल हैं। इनमें एक हाई स्कूल और ९१ प्राइमरी स्कूल हैं। इनके अतिरिक्त ८ लड़कियों के स्कूल हैं और ५ स्कूल ऐसे हैं जहां लड़के लड़कियां साथ पढ़ते हैं। यहां शिक्षित अध्यापिकाओं की बहुत कमी है। लोग लड़कियों को अधिक शिक्षा देना पसन्द भी नहीं करते और थोड़े ही दिनों बाद उन्हें स्कूल छुड़ा देते हैं। इन्हीं कारणों से इन स्कूलों की दशा संतोषजनक नहीं हैं।

शासन-विभाग

इन्दौर राज्य पाँच ज़िलों और एक परगने (आलमपुर) में विभाजित है। ये पांचों ज़िले फिर ३७ परगनों में बटे हुए हैं।

इन्दौर ज़िला—इस जिले का क्षेत्रफल १,५७० वर्ग मील है। इसके उत्तर में ग्वालियर राज्य का उज्जैन ज़िला; पश्चिम में सिंधिया के परगने बड़नगर, सागर और दिकथान–धार राज्य का धार परगना और मानपुर (ब्रिटिश) परगना और पूरब में देवास राज्य हैं। दक्षिण में इसको निमार परगने से विंध्याचल श्रेणियाँ अलग करती हैं।

ज़िले का अधिकतर भाग पहाड़ी है। ये पहाड़ियां अधिक ऊंची नहीं हैं। मूहो परगना अवश्य विंध्याचल श्रेणी में पड़ता है। गम्भीर नदी, मूहो गाँव के पास की एक पहाड़ी से निकल कर इसके ठीक बीच में होकर बहती है। चम्बल नदी इसके पश्चिमी भाग का वर्षाजल लेती हुई बहती है यह देपालपुर परगने

से होकर बहती है और सिप्रा नदी सानवर परगने को सींचती हुई बहती है। ऐसे पहाड़ी भाग को छोड़ कर जहां जंगल हैं, यहां रबी और खरीफ दोनों फसलें बहुत अच्छी होती हैं। यहां की मिट्टी काली और बहुत उपजाऊ है। इस मिट्टी में अन्न और पोस्ता की पैदावार बहुत अच्छी होती है।

इस जिले का मुख्य बन खूदेल की दक्षिणी सीमा से हसलपुर तक फैला हुआ है। यहाँ के मुख्य वृक्ष अंजन, चीड़, काहू और संदल आदि हैं।

यहां का जलवायु साधारण है। वर्षा लगभग २५, से ३५ इंच तक हो जाती है।

अन्य स्थानों की भांति के ही जानवर यहां भी पाए जाते हैं चीते यहाँ अधिकता से पाए जाते हैं। नदी के घाटोंपर तेंदुए भी अधिकता से पाए जाते हैं। बड़े बड़े सोतों और तालाबों में मछलियां भी खूब हैं। यहाँ चरागाह बहुत अच्छे हैं यहां घास और पानी की कोई कमी नहीं है। इस लिए गाय, बैल, भैंस और भेड़ तथा बकरी बहुत पाले जाते हैं। घोड़े और गधे आदि जानवर भी पाले जाते हैं।

यहाँ की मिट्टी खेती के लिये बहुत उपयोगी है इस लिये अधिकतर लोग किसानी कर के ही अपना जीवन निर्वाह करते हैं। रबी और खरीफ दोनों फसलें बहुत अच्छी होती हैं। सिंचाई अधिकतर कुओं द्वारा होती है। नदियां और बड़े बड़े नालों के किनारे तालाब भी बने हुए हैं जो सिंचाई के काम आते हैं। सिंचाई की आवश्यकता मुख्यतः गन्ने और पोस्ते के लिये होती। कभी कभी गेहूं आदि की फसलें भी सींची जाती है।

१८७७–७८ और १८९७–९८, इन दो वर्षों में फसलें बहुत ही खराब हुई थीं। १८९९–१९०० में तो भारी अकाल पड़ा था। पीड़ितों की सहायता के लिये बहुत से आश्रय स्थान आदि खुले

थे। 'परदा नशीन' स्त्रियों को उनके घरों पर ही सहायता पहुँचाने का प्रबंध किया गया था। तीन—चौथाई लगान की माफी दे दी गई थी। बीज और मवेशी खरीदने के लिये' भी राज्य द्वारा रुपया उधार दिया गया था। इस अकाल के बाद यहां गल्ला एक दम से मंहगा हो गया था। उदाहरण के लिये गेहूं का भाव १६ सेर से गिर कर ११ सेर हो गया था। इसका प्रभाव मजदूरी की दर पर पड़ा और वह भी काफी बढ़ गई।

यहां किसी भी चीज के कारखाने नहीं हैं। केवल देहातों में कम्बल और खादी बनाई जाती है। गौतमपुर और सनावर में कपड़ा रंगने का कुछ काम होता है।

बाहर भेजी जाने वाली वस्तुओं में अन्न, अफीम और कपास मुख्य हैं। नमक, मिट्टी का तेल, चीनी आदि वस्तुएं बड़ी मात्रा में बाहर से मगाई जाती हैं।

गावों में छोटे छोटे बाज़ार तो हैं इनके अतिरिक्त बरगोंदा हातोद, गौतमपुर और देपालपुर आदि स्थानों में बड़े बड़े बाज़ार भी लगते हैं।

छोटे छोटे मेले यहां बहुत से होते हैं किन्तु शिवरात्री का मेला काफी बड़ा होता है।

यहां कुल ६६८ नगर और गाँव हैं जिनकी जन-संख्या सब मिला कर लगभग ढ़ाई लाख होगी। इनमें से लगभग १ लाख ३० हज़ार मर्द और १ लाख २० हज़ार औरतें हैं। इन लोगों का मुख्य पेशा खेती करना और भेड़ बकरी चराना है। यहां के पठारी भाग में 'मालवी' भाषा बोली जाती है और पहाड़ी प्रदेशों में 'भीनी'।

इस ज़िले का सब से बड़ा अफसर सूबेदार है जो इन्दौर शहर में रहता है। उसके अधीन ५ अमीन हैं। ये अमीन एक एक परगने में नियुक्त हैं। बड़े बड़े परगनों में इनकी सहायता

के लिये थानेदार भी होते हैं। सूबा ही जिला मजिस्ट्रेट होता है। अमीनों के हांथ में भी उप-मजिस्ट्रेट के अधिकार होते हैं। थानेदार केवल 'कर' के अफसर होते हैं।

पूरा जिला पुलिस सम्बंधी इन्तजामों के हेतु १२ हल्कों में बांट दिया गया है। प्रत्येक हल्के में एक नाका या कोतवाली है। बड़ी कोतवाली का अफसर बड़ा दरोगा होता है। इसकी सहायता के लिये दो छोटे दरोगा होते हैं। अन्य कोतवालियां एक एक छोटे दारोगा के आधीन होती हैं। यहां के पुलिस की कुल संख्या लगभग ४९० है। इसके अतिरिक्त ८३३ गावों के चौकीदार भी हैं और किसी भी अवसर पर इनसे भी सहायता ली जा सकती है।

इन्दौर शहर में एक सेंट्रल जेल है जहां लम्बी सजा वाले कैदी रक्खे जाते हैं। परगनों में हवालात बने हुए हैं। केवल इन्दौर परगने में हवालात नहीं है।

यहाँ गौतमपुर में, दो डाकखाने साम्राज्य की ओर से खोले गए हैं। इनके अतिरिक्त १२ डाकखाने राज्य की ओर से हैं। राजधानी में एक तार-घर भी है।

इस जिले में कुल ९ म्युनिसिपैल्टियां हैं। प्रत्येक म्युनिसिपैल्टियों का सभापति वहां का सूबेदार है। अमीन उप-सभापति होता है और 'डाक्टर' (Medical, officer) मंत्री। शेष सदस्य वहां के रहने वालों में से चुने जाते हैं।

यहां के स्कूलों की संख्या २३ है। इनमें लगभग २,१८७ विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं। इनके अतिरिक्त डाक्टरी और वैद्यक सिखाने की ११ संस्थाएं हैं।

यह जिला लगभग १७३० में होल्कर वंश के अधीन हुआ था और तब से इसी वंश का शासन है। १८१८ में इन्दौर शहर (अहिल्याबाई के समय में) राज्य की राजधानी बना था।

परगना इन्दौर—राज्य के बीचो-बीच में होने के कारण, इसकी स्थिति बहुत अच्छी कही जा सकती है। दूसरे, राज्य की भी राजधानी-इन्दौर इसी परगने में है, इससे इसका महत्व और बढ़ जाता है।

यह परगना महारानी अहिल्या बाई द्वारा बना है। उस समय की राजधानी 'कामपेल' था। यहीं से इस परगने की नींव पड़ी। महारानी ने राजधानी कामपेल से हटाकर इन्दौर में कर दिया था। इसके बाद वह परगना तीन परगनों में विभाजित कर दिया गया। उन परगनों के नाम रक्खे गये—इन्दौर, महो और खूरेल। कामपेल इस समय खूरेल परगने में ही है। इन्दौर परगने में उस समय कुल ८५ गांव थे। १९०४ के पुनः संगठन में, इसके ११ गांव, बेतमा और ८, खूरेल परगनों में मिला दिये गये। इसके अतिरिक्त १४ गांव हरसोला के, ३१ हातोद के और ६ सानवर के, इसमें जोड़ दिये गये।

पूरे परगने की मिट्टी काली और बहुत उपजाऊ है। कालीमिट्टी होने के कारण यहां कपास खूब पैदा होता है। इस परगने में होकर चार नदियां—गम्भीर, खान, सरस्वती और असामती—बहती हैं। इससे भूमि और भी उपजाऊ हो गई है। बहुत से बड़े बड़े नाले और तालाब होने के कारण सिंचाई की काफी सुविधा है।

इस परगने में देपालपुर, महो, बेतमा और सानवर आदि परगनों तक पक्की सड़क बनी हुई है। आगरा—बम्बई सड़क भी इस परगने से होकर जाती है। राजपूताना—मालवा रेलवे भी राव, इन्दौर और पालिया स्टेशनों से होकर जाती है।

इन्दौर परगने में तीन थाने हैं जहां एक-एक थानेदार रहते हैं। इन्दौर और हतोद शहरों में म्युनिसिपैल्टियां भी हैं।

बेतमा परगना—यह ७३ गावों का परगना है यहां की आबादी लगभग १,५२,०४९ है। ऐसा लगता है कि गम्भीर और चम्बल नदियों के बीच स्थित होने के कारण ही इसका नाम पड़ा है। 'बेत' का अर्थ लोग 'द्वीप' बताते हैं। इसका उत्तरी—पश्चिमी भाग पहाड़ी है और शेष सारा भाग मैदान है। बेतमा, दौलताबाद, माछल और मेतावदा यहाँ के मुख्य स्थान हैं।

इन्दौर से धार तक जाने वाली सड़क इस परगने से होकर जाती है।

देपालपुर परगना—यहां का क्षेत्रफल लगभग २७२ वर्ग मील होगा। एक नगर और १०० गांव इस परगने में हैं और उनकी जनसंख्या कम से कम ३५००० अवश्य है।

इस परगने को गम्भीर और चम्बल नदियाँ सींचती हैं। यहाँ की भूमि भी चौरस है और काली मिट्टी होने के कारण कपास और गेहूँ की उपज के लिये बहुत उपयोगी है। खरीफ और रबी, दोनों फसलें इस परगने में बहुत अच्छी होती हैं, और गेहूँ यहां का मुख्य अनाज है। इसके लिए बहुत प्रसिद्ध भी है।

कपड़ा रंगने का काम गौतमपुर में अच्छा होता है। इस नगर से इन्दौर शहर तक एक पक्की सड़क बनी हुई है। यहां तक म्युनिसिपैल्टी भी है। इस परगने की दूसरी म्युनिसिपैल्टी, देवालपुर में है।

पालतू जानवरों में गाय, बैल और घोड़े तथा गधे मुख्य हैं।

यहां की मुख्य फसलें गेहूँ और अन्य मोटे अनाज हैं। कुछ स्थानों पर खरीफ और रबी, दोनों फसलें होती हैं। ज्वार और तिल की भी पैदावार होती है।

कारखाने आदि यहां बिल्कुल नहीं हैं। देहातों में केवल मोटा कपड़ा और कम्बल बनाया जाता है। छोटी सी मात्रा में अफीम बनाने का भी काम होता है।

बाहर भेजी जाने वाली वस्तुओं में अनाज, अलसी, घी, कपास और अफीम मुख्य हैं। चावल, नमक, तेल, चीनी और कपड़ा तथा कागज़ बाहर से मंगाया जाता है।

यहां लगभग ५० मेले होते हैं, जिसमें सोमवती का मेला उल्लेखनीय है। यह सिद्धनाथ महादेव के सम्मान में मनाया जाता है और इस मेले में लगभग ५००० व्यक्ति आते हैं।

रेल यहां कोई नहीं है और पक्की सड़क भी कोई ऐसी नहीं है जो उल्लेखनीय हो।

यहाँ के रहने वालों में ६७ प्रतिशत हिन्दू हैं। जन-संख्या का अधिकतर भाग खेती करके या चरागाह द्वारा अतिरिक्त खेतों में मज़दूरी करके अपना निर्वाह करता है।

सबसे बड़ा अफ़सर सूबेदार होता है। इसके आधीन ३ अमीन और ६ थानेदार हैं।

पुलिस सम्बन्धी इसके ५ विभाग किये गये हैं। यहां साम्राज्य की ओर से कोई भी डाकखाना नहीं है। राज्य की ओर से ९ अवश्य हैं।

स्कूल यहां ८ हैं जिनमें ५०५ लड़के शिक्षा पाते हैं। लेकिन लड़ाईयों का कोई भी स्कूल नहीं है।

खूरेल (खूदेल) परगना—यह परगना इन्दौर ज़िले के पूरब दक्खिन में स्थित है। पहले यह ७६ गांवों का एक छोटा सा परगना था। किन्तु अब यहां के गांवों की संख्या ९९ है।

१९०१ की जन गणना के अनुसार यहां की जन-संख्या भी १६,७४८ है।

यहां की भूमि बहुत उपजाऊ है। लेकिन यहां के खेतो की दशा अच्छी नहीं है। इसका कारण यह है कि यहां के रहनेवाले मुख्यतः राजपूत हैं। यह खेती करना अपनी शान के विरुद्ध समझते हैं। इसका फल यह होता है कि इनकी दशा दिनों-दिन गिरती जा रही है।

सिपारा और असामती यहां की मुख्य नदियां हैं। मेल-कलमा गांव पर ये दोनों मिलती हैं और यह स्थान हिन्दुओं द्वारा बहुत पवित्र माना जाता है।

यहां कोई भी रेल नहीं है। केवल कच्ची सड़कों द्वारा यह अन्य परगनों से मिला हुआ है।

महो परगना—यह जिला इन्दौर के दक्षिण में स्थित है। १८२५ में इन्दौर परगना तीन परगनों में विभाजित हुआ था—इन्दौर हासलपुर और महो। इसके बाद १९०४ में इसमें बहुत से गांव और जोड़ दिये गये हैं। इस प्रकार से यह १०८ गांवों का परगना बना दिया गया है।

इसका उत्तरी भाग विन्ध्याचल की पर्वत श्रेणियों से ढका हुआ है। शेष भाग पहाड़ी है, किन्तु वहां की भूमि उपजाऊ है। चम्बल और गम्भीर यहां की मुख्य नदियां है और दोनों ही इस परगने से निकलती हैं। इसके अतिरिक्त छोटी-छोटी नदियां भी बहुत सी हैं और कई बड़े-बड़े तालाब और झरने भी हैं।

यहां बहुत से पुराने किलों के भग्नावशेष भी मिलते हैं। उनमें से कसलगढ़ का किला, जो महो के उत्तर-दक्षिण में हैं, मुख्य हैं। महो से महेश्वर जाने के रास्ते में जायघाट पड़ता

है। यह भी देखने योग्य है। यहां से नर्वदा नदी का दृश्य बहुत ही आकर्षक और सुन्दर दिखाई देता है।

राजपूताना—मालवा रेलवे इस परगने से होकर जाती है। रास्ते में पड़ने वाले स्टेशनों महो और पाटलपानी मुख्य हैं। आगरा—बम्बई सड़क भी इस परगने से होकर जाती है। महो—सिमरोल सड़क महो इन्दौर खंडवा रोड से मिलाती है और महो—निमाक सड़क भी इस परगने से होकर जाती है।

इस परगने में कुल चार थाने हैं। एक म्युनिसिपैल्टिी भी है जो हासलपुर में है।

पेटलावद परगना—यह परगना इन्दौर जिले से बिल्कुल अलग है लेकिन शासन-प्रबन्ध के लिये उसके साथ कर दिया गया है। इसका क्षेत्रफल लगभग १५३ वर्ग मील है। कुल ५७ गांव इस परगने में हैं जहां की जन-संख्या, १९०१ की जनगणना के अनुसार ९,०२२ है। इनमें ४७१० पुरुष और ४,३१२ स्त्रियां हैं। हिन्दुओं की संख्या ४० प्रतिशत और अनीमिस्तों की ४५ प्रतिशत और मुसलमानों की ४३२ तथा जैनियों की ७२४ है।

यहां की भूमि पहाड़ी है। कई छोटी-छोटी नदियां इससे होकर बहती हैं जो महो में गिरती हैं। यह नदी परगने का उतरी सीमा बनाती है। यहां कई बड़े-बड़े नाले और ५ तालाब भी हैं। सबसे बड़ा तालाब देहन्दी में है।

इस परगने में अधिकतर भीलों की बस्ती है। यह बहुत गरीब हैं और खेती करके किसी तरह अपना जीवन निर्वाह करते हैं। वर्षा यहां लगभग ३० इंच हो जाती है।

लमाना सरदारों के समय में यह परगना रामगढ़ परगने

का एक भाग था। यहां एक फाटक था जो कि सात हाथ ऊँचा था। यह उँचाई एक बिस्वा मानी जाती थी और ऐसे ही २० बिस्वे का एक बीघा होता था।

यहां के मुख्य स्थान पेटलावद, कदीवद और रामगढ़ हैं। बाम्बे—बड़ौदा—सेंट्रल इण्डिया रेलवे का एक भाग—रतलाम गोधा लाइन इस परगने से होकर जाती है। यहां एक स्टेशन भी है जिसे बामनिया कहते हैं। इस स्टेशन को पेटलावद गांव से मिलाने के लिये एक पक्की सड़क भी है।

थाना या म्युनिसिपैल्टी यहां कोई नहीं है।

सानवर परगना—इसका क्षेत्र फल लगभग २०४ वर्ग मील है। पहले इसमें केवल ९४ गांव थे। १९०४ में २३ गांव हातोद परगना के और ६ देपालपुर के मिला देने से अब उसमें कुल ११३ गांव हैं। उसी समय इस परगने से ६ गांव खुरैल और ४ इन्दौर परगने में मिला दिये गये थे। यहां के रहने वालों की संख्या, १९०१ की जन गणना के अनुसार २९,७३६ थी। इनमें ९४ प्रतिशत हिन्दू हैं। शेष ६ प्रतिशत में जैन और मुसलमान आदि हैं।

मुग़ल बादशाहों के राज्य के समय यह मालवा सूबा में, उज्जैन की सरकार का एक 'महल' था।

यहां की भूमि बहुत उपजाऊ है। कपास की पैदावार खूब होती है क्योंकि यहां की मिट्टी काली है। बहुत से छोटे छोटे नालों के अतिरिक्त सिपरा, खान और कातकिया नदियां भी यहां से होकर बहती हैं। इनका पानी सिंचाई के काम आता है। कुएँ यहां बहुत कम हैं क्योंकि उनका पानी सिंचाई के योग्य नहीं होता। हाँ, तालाब अवश्य कई हैं और उनका पानी भी सिंचाई के काम में लाया जाता है।

राजपूताना—मालवा रेलवे इस परगना से हो कर जाती है। और अजनोद नामक एक स्टेशन भी इस परगने में है। पक्की सड़क यहां कोई भी नहीं है। केवल कच्ची सड़कों द्वारा यह इन्दौर और हातोद से मिला हुआ है।

यहां दो थाने हैं। सानवर, कुदाना और अजनोद यहां के मुख्य स्थान हैं। सानवर में एक म्युनिसिपैल्टी भी है।

मेहिद्पुर (माहतपुर) ज़िला—यह मालवा पठार के बीच में स्थित है। इसके उत्तर-पूर्व में ग्वालियर राज्य के अगर और राजापुर परगने हैं। दक्षिण-पूरब में देवास राज्य और ग्वालियर का उज्जैन जिला स्थित हैं। यहां का क्षेत्रफल लगभग ८४० वर्ग मील है।

इस ज़िले का नाम मेहिदपुर नगर के नाम पर रक्खा गया है। मेहदा नामक एक भील के नाम पर इस नगर का यह नाम पड़ा था। लोगों का यह विश्वास है कि उसी ने इस नगर को बसाया था। इसके पश्चात् सम्राट मुहम्मद शाह के समय इसका नाम मुहम्मद पुर रख दिया गया था। जब यह मल्हारराव प्रथम द्वारा वाघ घराने को जागीर में मिला, इसका नाम बदल कर माहत पुर रख दिया गया।

यह स्थान खूब खुला हुआ है। इसके दक्षिणी भाग की भूमि काली मिट्टी की बनी हुई है, इसलिये बहुत उपजाऊ है। पश्चिमी और पूर्वी भाग पहाड़ी है। इन पहाड़ियों के बीच घने जंगल हैं। पानी काफी बरसने के कारण यहां की घाटियों में अच्छे अच्छे चरागाह हैं।

इस ज़िले की मुख्य नदी सिपरा है। जो कि लगभग २९ मील बहती हुई ग्वालियर राज्य को इस जिले से अलग करती है और दोनों के बीच की सीमा बनाती है। इसमें पूरे वर्ष

पानी रहता है फिर भी यह सिंचाई के योग्य नहीं है, क्योंकि इसके किनारे चट्टानी और सीधे हैं। इसके अतिरिक्त छोटी और बड़ी काली-सिंध नदियां और गाँगी, मंदाकिनी और लखुन्दर भी इस परगने से होकर बहती है। ये नदियां सिंचाई के लिये भी बहुत उपयोगी हैं।

सिपरा और काली नदियों में मछलियां खूब पाई जाती हैं। तेन्दुए भी यहां सभी जगह पाए जाते हैं। चरागाह वाले प्रदेशों में गाय, बैल, बकरी और भेड़ आदि पाये जाते हैं। घोड़े और टट्टू भी पाए जाते हैं।

यहां की मुख्य उपज गेहूँ, चना, अलसी, ज्वार, कपास, उर्द और मूंग है। जहां जहां सिंचाई का अच्छा प्रबन्ध हो सकता है गन्ना और पोस्ते की खेती होती है।

खरीफ और रबी दोनों फसलें यहां होती हैं। साकी भूमि का लगभग ३१ प्रतिशत भाग खेती के काम आता है। अधिकतर कुओं और नाला तथा तालाबों के पानी से सिंचाई की जाती है। गन्ना, तम्बाकू, पोस्ता, फल और मूंगफली की फसलों को विशेषतः सिंचाई की आवश्यकता होती है। कभी कभी गेहूँ और चने की फसलें भी सींची जाती हैं।

अकाल यहां बहुत कम पड़े हैं। केवल १८९१ का अकाल उल्लेखनीय है। उसका कारण वर्षा की कमी थी। उस साल केवल ९ इंच वर्षा हुई थी। राज्य को ऐसे अवसरों पर काफी धन तकावी और अन्य सहायताओं के लिये व्यय करना पड़ता है।

यहां केवल खादी बनाने का काम होता है। बड़े बड़े गावों में कम्बल भी बनाया जाता है।

बाहर भेजी जाने वाली वस्तुओं में गल्ला, कच्ची अफीम, काला तम्बाकू, कपास, अलसी, तिल और अफीम के बीज आदि

मुख्य हैं। ये वस्तुएँ अधिकतर उज्जैन, इन्दौर, रतलाम, देवास और भोपाल भेजी जाती हैं। अन्य स्थानों से आने वाली वस्तुओं में नमक, चीनी, कपड़ा और मिट्टी का तेल मुख्य है।

फाल्गुन की छठी तिथि को यहां एक मेला होता है। यह मेला धुलेत में होता है। दूसरा मेला भादों में होता है। उसको नारायण मेला कहते हैं और वह लक्ष्मी नारायण के सम्मान में होता है। इस मेले के १५ दिन बाद नालखेरा का मेला होता है। इसके अतिरिक्त और भी बहुत से छोटे छोटे मेले होते है।

इस पूरे जिले में कोई भी रेल नहीं है। पक्की सड़क भी केवल एक है। बड़े बड़े देहातों में सप्ताहिक बाजार लगते हैं। उनमें भर्दा, मेहिदपुर और लाल गढ़ के बाज़ार मुख्य हैं।

सबसे अन्तिम जन-गणना १९०१ में हुई थी। इसके अनुसार यहां की जन-संख्या ९१,८५७ है। १८९१ में यहां की जन संख्या १२,६८९ थी। आबादी के इतना कम हो जाने का दायित्व १८९९-१९०० के अकाल पर है।

यहां के कुल गांवों और नगरों की संख्या मिला कर ४४०$\frac{१}{३}$ है। इनमें से केवल एक नगर की आबादी ५००० से अधिक है। पूरी जन-संख्या में ४७,५७५ पुरुष और ४४,२८२ स्त्रियां हैं। इनमें ८३,९१६ हिन्दू, ५६६० मुसलमान और शेष जैन हैं।

यहां के अधिकतर लोग खेती करके या खेतों में मजदूरी करके अपना जीवन निर्वाह करते हैं।

मालवी और रांगरी यहां की मुख्य बोलियां हैं। पढ़े-लिखे लोग केवल २ प्रतिशत हैं।

यहाँ का सबसे बड़ा अफसर सूबेदार होता है। उसके आधीन ५ अमीन हैं जो परगनों के शासन सम्बन्धी प्रबन्ध

किया हैं। इन परगनों को ९ थानों में भी विभाजित कर दिया गया है।

पुलिस सम्बन्धी प्रबन्ध के लिये जिले को ६ भागों में बाँटा गया है। इस विभाग का सबसे बड़ा अफसर बड़ा दरोगा है। उसके आधीन एक छोटा दरोगा भी है। जो मेहिदपुर में रहता है। अन्य स्थानों पर दीवान हैं। गावों की रक्षा का भार चौकीदारों पर होता है। इनसे अवसर पड़ने पर पुलिस के कार्यों में भी सहायता ली जा लकती है।

परगनों में हवालात हैं जहां छोटी छोटी सज़ा वाले क़ैदी और हवालाती रक्खे जाते हैं। केवल मेहिदपुर में एक जेल है जहां लम्बी सज़ा वाले अभयुक्त दंड भोगते हैं।

मेहिदपुर में साम्राज्य की ओर से एक डाकघर और एक तार घर है। राज्य की ओर से अन्य कई स्थानों पर डाक-घर खुले हुए हैं। मेहिदपुर और तराना में दो म्युनिसिपैल्टियां हैं।

राज्य की ओर से खुले यहां ८ स्कूल हैं। इनमें ४६० विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं। लड़कियों का कोई भी स्कूल नहीं है।

झार्दा परगना— इस परगने में कुल १२६ गांव है। इनमें रहने वालों की संख्या २२,२६९ है। क्षेत्र-फल यहां का १७९ वर्ग मील है। मेहिदपुर की भांति यह परगना भी महाकल बन का भाग था। यह १८८६ में एक अलग परगना बनाया गया है। उस समय उसमें केवल ६३ गांव थे। किन्तु बाद में इसमें और बहुत से गांव मिला दिये गये और अब उनकी संख्या १२६ है।

इस परगने में तीन थाने हैं :— इन्दोख, घाट पिपलिया और कुन्दीखेरा।

इसका उत्तरी भाग घने जंगलों से भरा हुआ है। लेकिन पूर्वी और दक्षिणी भाग में अच्छी और उपजाऊ भूमि है। काली-सिंध और सिपरा, यहां की मुख्य नदियां हैं। उत्तरी भाग में केवल ज्वार या अन्य मोटे अनाज पैदा होते हैं। लेकिन दक्षिणी भाग में खरीफ और रबी, दोनों फसलें होती हैं।

माकरन परगना—इस परगने का क्षेत्रफल ८२ वर्ग मील है और इसमें कुल ९३ गांव हैं।

१९०१ की जन गणना के अनुसार यहाँ की जन-संख्या १७,७३८ है। इनमें ९,२३३ पुरुष और ८,५०५ स्त्रियां हैं। धर्म का जहाँ तक सम्बन्ध है, इस आबादी के ९४ प्रतिशत लोग हिन्दू हैं।

परगने का तीन भाग मैदान है और केवल पूर्वी भाग पहाड़ी है। इसके पश्चिमी भाग को कालीसिन्ध नदी सींचती है। पूर्वी भाग में लखून्दा नदी बहती है। यह बड़ी काली-सिन्ध की सहायक नदी है।

यहाँ न तो कोई रेल है और न तो कोई पक्की सड़क है। शासन सम्बन्धी इसके दो विभाग किये गये हैं—पहला है थाना करेदी और दूसरा थाना पात हैं।

मेहिदपुर परगना—इस परगने का क्षेत्रफल २६ वर्ग मील और जन-संख्या २२,०४६ है। यह जगोती परगने के कुछ गावों और पुराने मेहिदपुर परगने से मिल कर बना है। कुल इसमें १०३ गांव हैं।

हवेली (मेहिदपुर) और जगोती इस परगने के दो थाने हैं। यहां के मुख्य स्थान मेहिदपुर, जगोती, धाबलाहरूद और चितावद तथा परसोली हैं।

इस परगने का अधिकतर भाग पहाड़ी है और कालीसिंध यहां की मुख्य नदी है। अफीम, कपास और तम्बाकू यहां की मुख्य फसलें हैं। १९०० के अकाल के पहले यहां चावल भी पैदा किया जाता था।

नागदा—मथुरा रेल इसके बीच से होकर जाती है। गोगापुर यहां का स्टेशन है। उज्जैन—आगरा सड़क भी इस परगने से होकर जाती है।

सुन्दरसी परगना—इसमें कुल १२ गांव हैं जिनका क्षेत्र-फल २३ वर्ग मील और जन-संख्या ३,५८७ है।

इस परगने में न तो कोई रेल है और न कोई पक्की सड़क है।

मकोरी में मवेशियों का एक बड़ा बाज़ार होता है लेकिन अब उसमें बहुत कम लोग आते हैं।

तराना परगना—इसका क्षेत्रफल २९२ वर्ग मील और आबादी २६,२१७ है। गांवों की संख्या १०५ है और नगर केवल एक है।

काली-सिन्ध यहां की मुख्य नदी है। भूमि भी यहां की खूब उपजाऊ है और रबी तथा खरीफ की दोनों फसलें। होती हैं।

कोई भी रेल यहां से होकर नहीं गुज़रतीं। पक्की सड़क भी केवल एक है।

नेमावर ज़िला—इस ज़िले का क्षेत्रफल १,०५९ है। इसके उत्तर में भोपाल, पूरब में छीपानेर का परगना है और दक्षिण में नर्वदा नदी इसे मध्य प्रान्त से अलग करती है। धार राज्य का निमानपुर मकरार परगना और ग्वालियर राज्य इसकी पश्चिमी सीमा में हैं।

इसको दो प्राकृतिक भागों में बांटा जा सकता है। उत्तरी-पश्चिमी भाग पहाड़ी है और जंगलों से ढका हुआ है। शेष भाग मैदान है और वहां गेहूँ आदि की खेती होती है। नर्वदा, जामनर और बाग्दी आदि यहां की मुख्य नदियां हैं।

यहाँ होने वाले पेड़ों में सागौन और अन्जन मुख्य हैं। जानवर अन्य प्रदेशों की भांति ही पाये जाते हैं।

कन्नौद (राजोर) परगना—इसका क्षेत्रफल २२७ वर्ग मील हैं और इसमें कुल १११ गांव हैं। जन-संख्या यहां की लगभग २१,६९६ है।

परगने का उत्तरी भाग पहाड़ी है। शेष भाग मैदान हैं। इसको धातुनी, बाग्दी, और सोती आदि नदियां सींचती हैं।

इसमें से होकर कोई रेल नहीं जाती। केवल एक पक्की सड़क अवश्य कन्नौद से नेमावर तक बनी है।

कांताफोर (कन्ताफोर) परगना—इस परगने के ६५६ गांव हैं जिनकी जन-संख्या २६,४७७ है। इसमें पुरुष १३,२८६ और स्त्रियां १३,१९१ हैं।

यह परगना १९०४ में सतवास और कांताफोर परगनों को मिलाकर बनाया गया था।

इसका उत्तरी भाग पहाड़ी है और जंगलों से ढका हुआ है। लेकिन पूर्वी और दक्षिणी भाग मैदान है। धातूनी नदी पूर्वी भाग और खारी पश्चिमी भाग को सींचती है।

यहां थाने तीन हैं—सतवास, खारिया और पानी गांव। रेल या पक्की सड़क यहां कोई नहीं है।

नेमावर परगना—यह १९०१ में पुराने नेमावर परगने

और हरन गांव परगने को मिलाकर बना था। इसका क्षेत्रफल ३२७ वर्ग मील और जन-संख्या २६,३९५ है।

उत्तरी भाग विन्ध्याचल की पहाड़ियों से ढका हुआ है लेकिन दक्षिण में मैदान है जो नर्मदा नदी तक फैला हुआ है। नर्वदा यहाँ की मुख्य नदी है।

पानी वर्ष में लगभग २८ इंच बरसता है।

थाने यहां दो हैं नेमावर और हरनगांव।

यहां कोई रेल तो नहीं है लेकिन एक पक्की सड़क अवश्य है।

निमाड़ ज़िला—यह ज़िला इन्दौर राज्य के बिल्कुल दक्षिणी भाग में पड़ता है। इसका क्षेत्रफल ३,८७१ वर्ग मील है। इसके उत्तर में विंध्याचल पर्वत श्रेणियां और दक्षिण में सतपुड़ा पर्वत स्थित हैं। पूर्व में धार परगना और ब्रिटिश साम्राज्य के आधीन खंडवा और खानदेश के ज़िले हैं। पश्चिम में खानदेश का कुछ भाग और बरवानी राज्य की सीमा बनाते हैं।

इसके बीच में नर्वदा की घाटी है। उत्तर से विन्ध्याचल तथा दक्षिण में सतपुड़ा पर्वत श्रेणियां हैं। इस प्रकार से इसका अधिकतर भाग पहाड़ी है। लेकिन नर्वदा की घाटी की भूमि बहुत उपजाऊ है और वहां अच्छी फसलें होती हैं।

यहाँ की मुख्य नदियां नर्वदा, वेदा और कुन्दा आदि हैं। तालाब भी यहां बहुत बड़े बड़े हैं। उनमें चोली, वाली, सरपाला और मंडलेश्वर उल्लेखनीय हैं।

इस पूरे ज़िले में जंगल बहुत हैं। वे बहुत बड़े बड़े और सघन होने के साथ ही साथ बहुत मूल्यवान भी हैं। खारगों का परगना, जो नर्वदा के दक्षिण में है, इस सम्बंध में बहुत प्रसिद्ध है। यहां पाये जाने वाले मुख्य वृक्ष सागौन और अंजन हैं।

यहाँ रबी और खरीफ दोनों फ़सलें होती हैं। केवल गन्ना

और पोस्ता के लिये ही सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि गेहूं, चना और मकई की फसलें भी सींची जाती हैं।

यहां कपास से बिनौला निकालने का काम होता है। देहातों में खादी और कम्बल बनाये जाते हैं। मंडलेश्वर में अच्छे अच्छे लुगरा और धोतियां के बनाने का एक कारखाना है। बिनौला निकालने के भी ६ कारखाने हैं।

बाहर भेजी जाने वालो वस्तुओं में घी, तिल, कपास, मुख्य है, और बाहर से आने वाली वस्तुओं में चीनी, तम्बाकू, नमक कपड़ा और तेल मुख्य हैं।

राजपूताना मालवा रेल इसके पूर्वी भाग को छूती हुई जाती है। यहां दो पक्की सड़कें भी हैं।

बड़े बड़े देहातों में सप्ताहिक बाजार लगते हैं। उनमें मंडलेश्वर का बाजार सब से बड़ा होता है और इसमें बहुत से मवेशी बिकने को आते हैं।

यहां बोली जाने वाली भाषाओं में निमारी, हिन्दी और भीली मुख्य हैं।

अन्य जिलों की भांति यह जिला भी एक सूबा के आधीन है। उसके आधीन एक नायब सूबेदार जो मंडलेश्वर में रहता है, और कई अमीन हैं।

यहाँ पुलिस की संख्या ४६७ है। दो जिला दरोगा इस विभाग का प्रबंध करने के लिये हैं। गावों की रक्षा के लिये चौकीदार है।

मंडलेश्वर में एक जेल है और अन्य परगनों में हवालात बने हुए हैं।

साम्राज्य की ओर से खोले गये डाक-घर बरवाहा, चिखाल्दा, मंडलेश्वर, सनावद और सिंघाना में हैं। २४ डाकघर अन्य मुख्य मुख्य गांवों में राज्य की ओर से खोले गए हैं।

खारगों, बरवाहा सनावद और मंडलेश्वर तथा सेंदवा में म्युनिसिपैल्टियां भी हैं।

यहां २४ स्कूल हैं जिनमें १,५५० लड़के और ४० लड़कियां शिक्षा पाते हैं। पहले केवल खारगों में एक अस्पताल था, लेकिन अब पूरे ज़िले में कुल १९ अस्पताल हैं।

बरवाहा परगना—इसका क्षेत्रफल ३२७ वर्ग मील है और इसमें कुल २०१ गांव हैं जिनमें लगभग ३०,०९३ मनुष्य रहते हैं।

यह परगना शासन सम्बंधी प्रबंध की दृष्टि से बलवारा और काटकूट नामक दो थानों में विभाजित है।

राजपूत मालवा रेलवे इस परगने से हो कर जाती है।

भीका गांव परगना—इसमें २३९ गांव हैं जिनकी जन-संख्या कुल २७,१५७ है। इसका क्षेत्रफल ५०३ वर्ग मील है।

यहां का जलवायु बहुत ही स्वस्थ्यप्रद है। वर्षा लगभग २५ इंच होती है।

ब्राह्मण गांव—इसका क्षेत्रफल ५९ वर्ग मील है। यह तीन ओर से अन्य राज्यों द्वारा घिरा हुआ है। यहां के रहने वालों में अधिकतर हिन्दू हैं।

इस परगने में खूरमपुर नामक केवल एक थाना है।

चिखाल्दा परगना—इसकी जन-संख्या २४,२३२ और क्षेत्र फल २४,२३१ है। गांवों की संख्या ७७ है।

उरी और बाग्नी आदि इस परगने में बहने वाली छोटी छोटी नदियां हैं।

देहरी. निसारपुर और सिंधाना, इस परगने के तीन थाने हैं जिनमें यह विभाजित किया गया है।

कसरावद परगना—इसका क्षेत्रफल २२६ वर्ग मील है। इसमें कुल १५७ गांव है जिनकी जन-संख्या २६,०७१ है।

बालकवारा और मर्दाना यहाँ के थाने हैं।

खाचानी परगना—यह १३४ वर्ग मीलों में फैला हुआ है। १९०१की जन संख्या के अनुसार यहां की जन संख्या ६,०८९ है।

इसका उत्तरी और दक्षिणी भाग पहाड़ी है और शेष मैदान है। मान और मंदावदी इसमें हो कर बहती हैं। यहां तीन बड़े बड़े तालाब भी हैं। यहां न तो कोई रेल है और न कोई पक्की सड़क है।

महेश्वर परगना—यह २५८ वर्ग-मीलों में फैला हुआ है और यहां की जन संख्या ३४,२४३ है।

धार गांव, काकदी और कराई—यहां के तीन थाने हैं।

सनावद परगना—इसका क्षेत्र फल १०६ वर्ग मील है। यहाँ के ८६ गांवों में रहने वालों की जन संख्या कुल २६,६१२ है। कुछ दिन हुए इसमें १४ गांव और जोड़ दिये गये हैं।

परगने का अधिकतर भाग मैदान है और काली मिट्टी से ढका हुआ है। कपास और गेहूं की उपज के लिये यह बहुत ही उपयोगी है। अफीम भी यहां खूब पैदा होती है।

राजपूताना—मालवा सड़क भी इस परगने से होकर गुजरती है।

सेंदवा परगना—इसके १५० गांव, ८१७ वर्ग मीलों में फैले हुए हैं। अधिकतर भाग इसका पहाड़ी है जहां भील आदि रहते हैं।

सेगांव और वार्ला यहां के थाने हैं।

इस परगने से कोई भी रेल नहीं गुजरती।

केवल कुछ कच्ची सड़कों द्वारा यह अन्य परगनों से मिला हुआ है।

रामपुर-भानपुर ज़िला—यह ज़िला राज्य के उत्तरी भाग में स्थित है। रामपुर और भानपुर दो अलग अलग ज़िले थे। १९०८ में इन्हें मिला कर एक ज़िला बना दिया गया है। इसका क्षेत्रफल २,१२३ वर्ग मील है। इसके उत्तर में उदयपुर, कोटह, झालवार (राजपूताना) स्थित हैं। ग्वालियर, सीतामऊ और टोंक का पिरावा परगना दक्षिण में है। इसके पूरब में छिलछिल पुर और झानवार हैं और पश्चिम में ग्वालियर राज्य है।

इसका उत्तरी भाग पहाड़ी है। किन्तु दक्षिणी भाग मैदान है। भूमि स्थान स्थान पर अलग अलग प्रकार की है। चाम्बल और काली यहां की मुख्य नदियां हैं।

ख़रीफ और रबी दोनों फसलें इस प्रदेश में होती हैं। केवल पोस्ता और तरकारियों के लिये सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है जो अधिकतर कुओं द्वारा किया जाता है। गेहूँ, चना और ज्वार तथा मक्का यहां की मुख्य फसलें हैं। कपास और अलसी की खेती भी अच्छी होती है।

यहां का कारबार बहुत प्रसिद्ध था किन्तु मशीनयुग ने उसे बिल्कुल चौपट कर डाला है। अब केवल उनकी याद ही शेष रह गई है। दिल्ली दरबार (१९०३) के समय वहां की बनी हुई कुछ वस्तुएँ प्रदर्शिनी में भी रक्खी गई थी। धातुओं का कुछ काम यहाँ भी होता है। संदल लकड़ी और उसकी बनीं हुई वस्तुएँ काफी मात्रा में अब भी बाहर भेजी जाती हैं।

यहां से गल्ला, कच्ची अफीम, अलसी और घी बड़ी मात्रा में बाहर भेजा जाता है। बाहर से आने वाली वस्तुओं में

नमक, चीनी, तम्बाकू, मसाला और मिट्टी का तेल आदि चीज़ें मुख्य हैं।

यहां रेल कोई भी नहीं है। बड़े बड़े गांवों में साप्ताहिक बाजार लगते हैं, किन्तु ये बहुत छोटे छोटे होते हैं। इस जिले में कोई बड़ा मेला भी नहीं होता।

रामपुर में एक जिला-जेल है और अन्य परगनों में कुल १५ हवालात हैं।

सूनेल और तालेन में साम्राज्य की ओर से खोले गये डाक-घर हैं। २५ अन्य मुख्य स्थानों पर राज्य की ओर से डाक-घर खोले गये हैं। भानपुर में एक कमेटी बनाई गई है जिसे म्युनिसिपैल्टी का रूप भी ले रही है।

यहां कुल १९ स्कूल हैं जिनमें १,४९८ विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं।

नारायण गढ़ परगना—यह रामपुर भानपुर के दक्षिण में स्थित है। पुराने नारायण परगना और अन्तरी परगने के कुछ गांवों से मिलाकर यह बनाया गया है।

यह प्रदेश समतल मैदान है और साहू तथा रेतम नदियां इसे सींचती है।

झार्दा और पिपलिया यहाँ के दो थाने हैं।

राजपूताना-मालवा सड़क इस परगने से होकर जाती है। पिपलिया और थारोद–उस पर बने दो स्टेशन हैं। एक पक्की सड़क भी पिपलिया से भानपुर तक जाती है जिसके बीच में नारायण गढ़ पड़ता है।

रामपुर परगना—इस परगने में एक नगर और १२२ गांव हैं। १९०१ की जन गणना के अनुसार यहां की जन संख्या २०,१०० है। इसका क्षेत्रफल ३५७ वर्ग मील है।

केवल उत्तर को छोड़ कर; यहां की सारी भूमि चौरस और उपजाऊ है।

ज़ोरापुर परगना—इसका क्षेत्र फल ३१० वर्ग मील है और इसमें कुल १८६ गांव हैं। इन गांवों की आबादी कुल मिला कर ३५,२७१ है।

इस परगने का अधिकतर भाग पहाड़ी है और कालीसिंध नदी वहाँ से हो कर बहती है। यहाँ कई बड़े बड़े तालाब भी हैं।

गनगुरनी और माछलपुर नामक दो थानों में यह विभाजित है।

आलमपुर परगना—यह परगना बहुत छोटा है और सब से अलग है। इसका क्षेत्र फल ३७ वर्ग मील है। आबादी इसकी लगभग १६,७११ है इसमें ८,४९४ पुरुष और ८,२१७ स्त्रियाँ हैं। जन संख्या का लगभग ८८ प्रतिशत भाग हिन्दू हैं। शेष में मुसलमान और जैन आदि हैं।

इसमें कुल २६ गांव है, जिनमें आलमपुर सब से बड़ा है। इसको मल्हार नगर भी कहते हैं। इसकी जन संख्या २,८४३ है।

पहले यह निमार जिले में ही शामिल था, किन्तु अब उसे अलग कर दिया गया है। प्रबन्ध के लिये वहां एक अमीन है जो कि उस स्थान का मैजिस्ट्रेट भी है।



हिज़ हाईनेस महाराजाधिराज राजराजेश्वर सवाई श्री यशवन्तराव होल्कर बहादुर जी० सी० आई० ई० महाराज इन्दौर ।

देशी राज्य

"भूगोल" के सोलहवें वर्ष का विशेषाङ्क

"भूगोल" के आकार के २४४ पृष्ठ, कई नक़शे और लगभग १०० चित्र

देशी राज्य में भारतवर्ष के प्रधान राज्यों का विस्तृत वर्णन है। भारतवर्ष के छोटे बड़े सभी देशी राज्यों का समावेश है। अन्त में लगभग ४४ पृष्ठों में देशी राज्यों की अकारादि क्रमानुसार अनुक्रमणिका है। इस अनुक्रमणिका में सभी राज्यों का संक्षिप्त-परिचय है। सभी बड़े राजाओं के चित्र और प्रधान राज्यों के नक़्शे हैं।

देशी राज्य हिन्दी साहित्य में सचमुच अनोखा है। मूल्य केवल २) है।

मैनेजर, भूगोल-कार्यालय, इलाहाबाद

देश दर्शन

पुस्तकाकार सचित्र मासिक पत्र

देश-दर्शन में प्रति मास किसी एक देश का सर्वाङ्ग पूर्ण वर्णन रहता है। लेख प्रायः यात्रा के आधार पर लिखे जाते हैं। आवश्यक नक्शों और चित्रों के होने से देश-दर्शन का प्रत्येक अङ्क पढ़ने और संग्रह करने योग्य होता है।

मार्च १९३९ से मार्च १९४४ तक देश-दर्शन के निम्नाङ्क प्रकाशित हो चुके हैं:— प्रत्येक अंक का मूल्य ।=) है।

लङ्का, इराक, पैलेस्टाइन, बरमा, पोलैंड, चेकोस्लोवेकिया, आस्ट्रिया, मिस्र भाग १, मिस्र भाग २, फिनलैंड, बेल्जियम, रूमानिया, प्राचीन जीवन, यूगोस्लैविया, नार्वे, जावा, यूनान, डेनमार्क, हालैंड, रूस, थाई (श्याम) देश, बलगेरिया, अल्सेस लॉरेन, काश्मीर, जापान, ग्वालियर, स्वीडन, मलय-प्रदेश, फिलीपाइन, तीर्थ दर्शन, हवाई द्वीपसमूह, न्यूज़ीलैंड, जर्मनी, आस्ट्रेलिया, मैडगास्कर, न्यूयार्क, सीरिया, फ्रांस, अल्जीरिया, मरक्को, इटली, ट्यूनिस, आयरलैंड, अन्वेषक दर्शन भाग १, २, ३, नेपाल, स्विटज़रलैण्ड, आगरा, अरब, कनाडा, मेवाड़, मेक्सिको, इङ्गलैंड, विश्वाश्चर्य, पनामा, इन्दौर, [illegible], जबलपुर, कॉकेशिया, रीवां, बर्लिन और मालाबार ......

'भूगोल'-कार्यालय, करहाघाट, इलाहाबाद।